ISSN : 2583-9411 (Online)

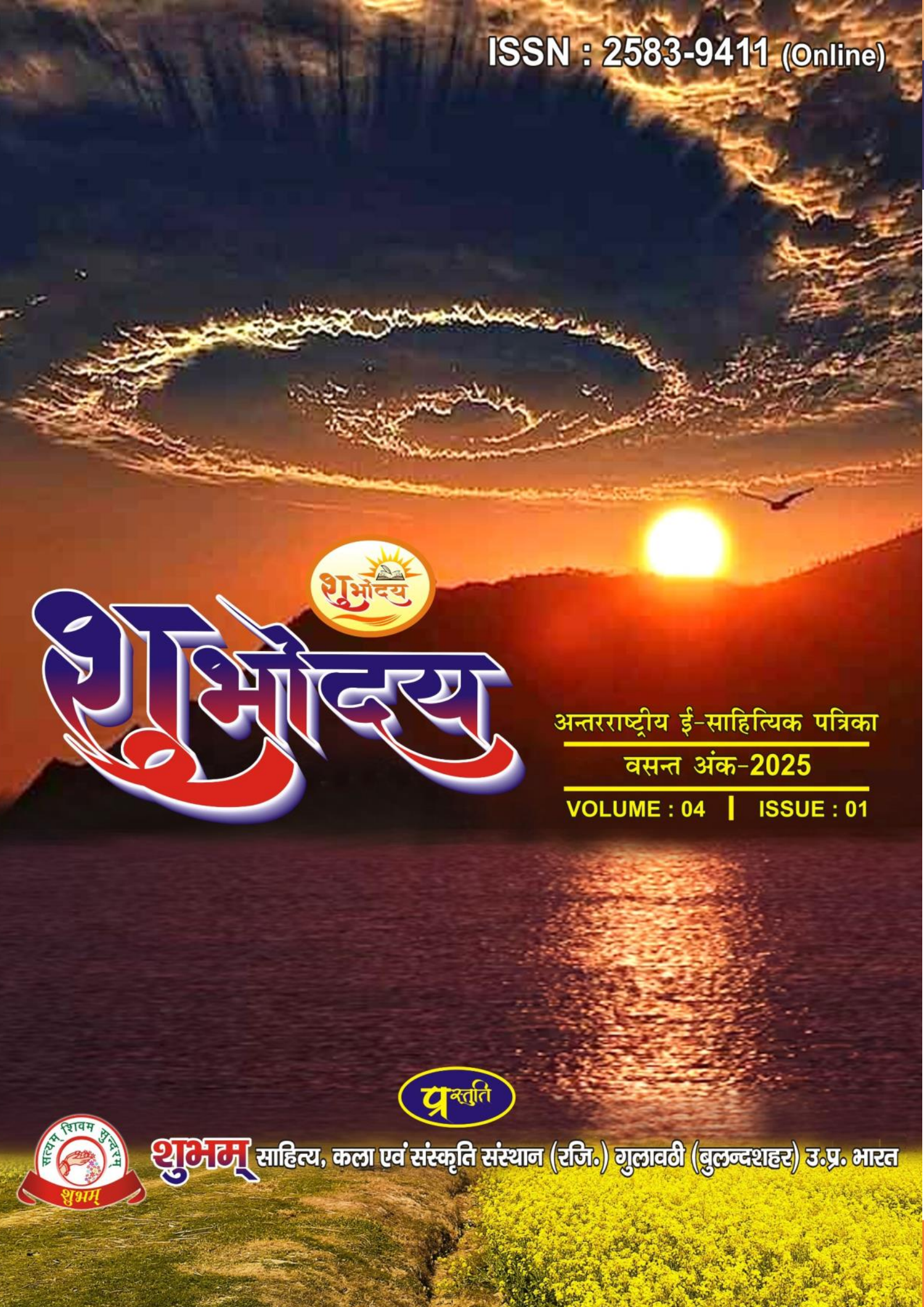

शुभोदय

अन्तरराष्ट्रीय ई-साहित्यिक पत्रिका

वसन्त अंक-2025

VOLUME : 04 | ISSUE : 01

प्रस्तुति

शुभम् साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (रजि.) गुलावठी (बुलन्दशहर) उ.प्र. भारत

शुभोदय

ई-साहित्यिक पत्रिका
ईमेल: shubhodayashubham@gmail.com

वसंत अंक - 2025

ISSN: 2583-9411(Online)
Volume:: 4 * Issue: 01

संरक्षक
डॉ. कमल किशोर गोयनका
पूर्व उपाध्यक्ष, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
भारत सरकार

प्रोफेसर महावीर सरन जैन
पूर्व निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान,
भारत सरकार

प्रधान संपादक
डॉ. देवकीनन्दन शर्मा
मोबाइल - 9837573250

संपादक
डॉ. ईश्वर सिंह
मोबाइल - 9899137354

सह संपादक
मुकेश निर्विकार
संदीप कुमार सिंह
डॉ. नीलम गर्ग
डॉ. ब्रजराज यादव
डॉ. राजकुमार वर्मा (तकनीकी)

प्रस्तुति
'शुभम्'
साहित्य, कला एवं संस्कृति संस्थान (पंजीकृत)
गुलावठी (बुलन्दशहर), उत्तर प्रदेश, भारत

डिज़ाइन
त्रिगुण कुमार झा
मो. : 9810679648

'शुभोदय' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार रचनाकारों के हैं, उनसे 'संपादक मंडल' की सहमति होना अनिवार्य नहीं है।

'शुभोदय' अनुक्रमणिका

1. सरस्वती वंदना 5
2. प्रधान संपादक की कलम से 6
3. संपादक की कलम से 7
4. साक्षात्कार 8

लेख /संस्मरण

1. विजय रंजन 12
2. प्रो. महावीर सरन जैन 16
3. रिंकल शर्मा 17
4. अमित गुप्ता 19
5. प्रशांत शर्मा 21
6. मधु वार्ष्णेय 22
7. सोनम यादव 24

कविता/गीत/ग़ज़ल

1. डॉ अंजु दुआ जैमिनी 25
2. डॉ. देवकीनन्दन शर्मा 26
3. अमनदीप 27
4. नेहा वैद 28
5. डॉ. भावना तिवारी 29
6. गोविन्द गुलशन 30
7. मासूम गाजियाबादी 31
7. सञ्जय शुक्ल 32
8. कीर्ति 'रतन' 33

कहानी / लघु कथा

1. डॉ. लवलेश दत्त 34
2. पूनम सुभाष 38

पुस्तक समीक्षा

1. देवेंद्र देव मिर्जापुरी 41
3. डॉ.सुभाष चन्द्र दीक्षित 43
4. मुकेश निर्विकार 45
5. गीता रस्तोगी 'गीतांजलि' 47

विरासत

1. आलोक यात्री 50

साहित्यिक हलचल

1. साहित्यिक हलचल 52

नियमावली 54

शुभोदय

वर दे...

वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

काट अंध-उर के बंधन-स्तर,
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर,
जगमग जग कर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

नव गति, नव लय, ताल-छंद नव
नवल कंठ, नव जलद-मन्द्ररव,
नव नभ के नव विहग-वृंद को,
नव पर, नव स्वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
वर दे, वीणावादिनि वर दे,
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव
भारत में भर दे !

– सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

वासंती रंग का सारस्वत अनुष्ठान ...

धरा वही, गगन वही; फिर क्यों वह रस नहीं? सुपरफास्ट स्पीड़ से बदल रही दुनिया और जिंदगी में अचंभित करने वाले बदलावों के बीच यह सवाल बार-बार उठता है।

पक्षियों की सुरीली चहचहाट गुम हो गई, जानलेवा आवाज में डीजे के बाजारू गीतों की भरमार है। नदियों से चप्पे वाली नावें गुम हो गईं, प्रदूषण फैलाती मोटर वोटों और क्रूजों का दौर आ गया है। स्वदेशी स्ट्रीट फूड़ों की जगह विदेशी रेस्तारांओं के व्यंजनों ने ले ली है। असली साधु संत तो कम ही दिखाई देते हैं लेकिन नकली साधुओं की सड़कों पर और मेलों में पूरी फौज मौजूद है। और तो और राष्ट्रीय कहलाने की हसरत तो पुरानी हो चुकी है, अब तो अंतरराष्ट्रीय टैग लगवाने का बाजार गर्म है। कहाँ तक कहें, 'हरि अनंत, हरि कथा अनंता'।

इस सबके मध्य उजास अगर कहीं है, तो वह साहित्य में है, अनेक युगीन दबावों के बीच आज भी इसमें बहुत कुछ सुरक्षित और संरक्षित है। इसी उजास को फैलाने के लिए एक सारस्वत अनुष्ठान है, 'शुभोदय'। साहित्यिक ई-पत्रिका के रूप में अपनी आरंभिक यात्रा के चरण में यह 'वसंत-2025' अंक के साथ चौथे वर्ष में प्रविष्ट हो रहा है। इसकी सनातनी संचेतना और उर्जावान रचनाधर्मिता हमें आश्वस्त करती है कि 'शुभोदय' जीवन के उस वासंती रंग को संचित और उद्वेलित कर सकेगा जो शुष्क-सा हो चला है।

'शुभोदय' (वसंत 2025) के सभी सम्मानित रचनाकारों के वंदन-अभिनंदन के साथ संपादक मंडल को आकाश भर शुभकामनाएं और साधुवाद ....

'श्रीमत्कुंज विहारिणे नम:'

डॉ. देवकीनन्दन शर्मा

प्रधान संपादक

सफर जारी रहे .....

मंजिल उन्हीं को मिलती है, जो मंजिल को पाने के लिए प्रयास करते हैं, उसकी ओर कदम बढ़ाते हैं। और यह भी कि सफर का एक अपना ही आनंद होता है, जो मंजिल पर पहुँचकर समाप्त हो जाता है। प्रयास की महत्ता परिणाम से अधिक होती है, प्रयास रहेगा तो मंजिल को आज नहीं तो कल मिलना ही है लेकिन प्रयास समाप्त हो गए तो मंजिल न तो मिल पाएगी और हासिल मंजिल एक दिन अंतिम पंक्ति में पहुँच जाएगी।

'शुभोदय' का सफर सोत्साह जारी है, हम इस सफर का आनंद ले रहे हैं, यह सफर किसी मंजिल पर पहुँचकर रूक न जाए, यूँ ही अनवरत चलता रहे और अपने समय के साथ कदम से कदम मिलाकर चलता रहे, यही हमारी कामना है, यही हमारा प्रयास है। सीमित साधनों एवं संसाधनों के बीच चौथे वर्ष में 'शुभोदय' का प्रवेश हमें प्रेरणा, प्रोत्साहन और ऊर्जा प्रदान कर रहा है। इस प्रेरणा, प्रोत्साहन और ऊर्जा को स्रोत हमारे पाठक, रचनाकार और शुभचिंतक हैं जो अपने योगदान, मार्गदर्शन और अभिमत से इस पत्रिका को निरंतर बेहतर बना रहे हैं। पिछले अंकों की ही तरह, इस अंक की सामग्री भी साक्षात्कार, आलेख, संस्मरण, यात्रा संस्मरण, कहानी, कविता/गीत/ग़ज़ल, साहित्यिक हलचल, पुस्तक समीक्षा आदि शीर्षकों में वर्गीकृत की गई।

मैं 'शुभोदय' के संरक्षक मंडल, प्रो. महावीर सरन जैन और डॉ. कमल किशोर गोयनका के प्रति उनके सतत् मार्गदर्शन के लिए तथा संपादक मंडल के सदस्यों के प्रति उनके सहयोग के लिए हृदय से आभार ज्ञापित करता हूँ। हमें आपके अभिमत की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर,

डॉ. ईश्वर सिंह
संपादक

सोशल मीडिया ने साहित्य को मंच प्रदान किया है...

....विजय कुमार सिंह

सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री विजय कुमार सिंह ने, जिनके पास देश-विदेश में साहित्य के विभिन्न पक्षों का विशद् अनुभव है, के साथ शुभोदय साहित्यिक ई-पत्रिका के संपादक मंडल (डॉ. देवकीनन्दन शर्मा, डॉ. ईश्वर सिंह और श्री मुकेश निर्विकार) ने 7 दिसंबर, 2024 को उनके बुलंदशहर स्थित आवास पर मुलाकात की और भारतीय तथा अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में उनका साक्षात्कार लिया। प्रस्तुत हैं साक्षात्कार के प्रमुख अंश:

शुभोदय: हिंदी साहित्य की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उपस्थिति को आप किस रूप में देखते हैं?

वी के सिंह: हिंदी भारत के बाहर भी बहुत से देशों में पहुँच चुकी है। इंग्लैंड में तो हिंदी बहुत पहले पहुंच गई थी, मॉरीशस में भी हिंदी में बहुत काम हुआ है। न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया में हिंदी करीब पिछले 50 सालों में पहुंची है इसलिए इन देशों में यह अभी प्रारंभिक चरण में ही है। विदेशों में जहां पर हिंदी भाषी लोग गए हैं वहीं हिंदी साहित्य को आगे बढ़ाने का काम कर रहे हैं और साहित्य सृजन कर रहे हैं। ऑस्ट्रेलिया में अशोक चक्रधर जी के बेटे हैं, कुँवर बेचैन के पुत्र प्रगीत कुंवर और बहू भावना कुंवर है, रेखा राजवंशी हैं, मैं स्वयं हूँ, ये सभी हिंदी साहित्य में काफी काम कर रहे हैं लेकिन ये वही लोग हैं जिनकी जड़ें भारत से जुड़ी हैं और अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि आदि के कारण पहले से ही हिंदी साहित्य सृजन से जुड़े रहे हैं। यहां विद्यालयों में हिंदी विषय को पढ़ाने का चलन अब बढ़ रहा है और उसे सरकार भी मान्यता दे रहीं हैं। इन विषयों में भी हिंदी साहित्य पढ़ाया जाता है। जहाँ तक साहित्य के अध्ययन या लेखन का प्रश्न है तो यह कार्य अभी भी अधिकांशत: भारतीय लोग ही कर रहे हैं।

शुभोदय: हिंदी भाषा की विदेशों में स्वीकार्यता पर आपका अभिमत क्या है?

वी के सिंह: विदेशों में भाषा के रूप में हिंदी पर ज्यादा जोर है। वहां बहुतायत में ऐसे स्कूल हैं जहाँ हिंदी को एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। जो भारतीय माता-पिता विदेश में हैं, वे इसको लेकर सचेत हैं कि भूमंडलीकरण के दौर में उनके बच्चे अपनी भाषा से विमुख न हो जायें। इसलिए वे घर पर हिंदी में बात करते हैं ताकि उनके को मातृभाषा का ज्ञान हो। स्थानीय मांग के अनुरूप लोग कोई भी भाषा प्रयोग करते हों लेकिन वे अपनी संस्कृति को अक्षुण्ण रखना चाहते हैं। चूंकि भारत के पास एक बड़ा बाजार है और भारत का आम उपभोक्ता हिंदी में संप्रेषण चाहता है इसलिए बाजार की मांग भी विदेश में हिंदी के प्रचार-प्रसार में सहायक सिद्ध हो रही है। इस दृष्टि से विदेश में हिंदी भाषा के क्षेत्र में अच्छा काम हो रहा है। 20 साल पहले वहां कोई मुझे हिंदी में बोलता हुआ नहीं दिखाई देता था और अब लोग हिंदी में बोलते हैं। लोग अपनी भाषा पर गर्व भी करते हैं। ऐसा मैंने महसूस किया है।

शुभोदय: हिंदी कविता और कवियों की विदेशों में लोकप्रियता पर आप क्या कहना चाहेंगे, विशेष रूप से विदेशी पाठकों या श्रोताओं के संदर्भ में।

वी के सिंह: अगर विदेशी हिंदी के पाठकों की बात की

जाए तो न के बराबर है। वहां जो हिंदी पढ़ाई आती है वह प्रारंभिक स्तर की होती है। यूनिवर्सिटी में उन्हें हिंदी का व्याकरण पढ़ा दिया जाता है, वाक्य रचना सिखा दी जाती है, बस। उनसे यह अपेक्षा करना कि वह कविताओं को समझेंगे, उचित नहीं है। काव्य गोष्ठियां होती हैं किंतु उनकी बारंबारता कम रहती है। उनमें भी हिंदी भाषी लोग ही आते हैं। हिंदी साहित्य प्रेमी इनमें उत्साहपूर्वक भाग लेते हैं और एक गोष्ठी में 30 से 40 तक लोग उपस्थित हो जाते हैं, जो विदेशों को देखते हुए एक अच्छी संख्या है। किंतु इनमें अभी विदेशी श्रोताओं या पाठकों का जुड़ना शेष है।

शुभोदय: आजकल बहुतायत में हो रहे कविता सृजन को गुणवत्ता की दृष्टि से आप किस तरह देखते हैं?

वी के सिंह: मैं समझता हूँ कि इस समय चूंकि हम सोशल मीडिया के युग हैं तो उसके माध्यम से हमें इसकी जानकारी तुरंत मिल जाती है। रचना तुरंत ही फेसबुक या व्हाट्सएप पर आ जाती है तो सबके संज्ञान में आ जाती है। मुझे लगता है कि पहले भी लेखन बहुतायत में ही होता होगा, यह बात दूसरी है कि जो कुछ खास पत्रिकाओं में छप जाता था वह सबको पता चल जाता था और बहुत सा लेखन रचनाकार की डायरी तक ही सीमित रह जाता था। अब हमें सोशल मीडिया की सुविधा मिल गई है। इससे हर रचनाकार को कम से कम एक प्लेटफार्म तो मिल ही गया है। जहाँ तक गुणवत्ता की बात है, तो देखिए कविता तो वही चलती है जो साहित्यिक गुणो से युक्त होती है। जिसमें ये गुण नहीं होंगे वह स्वत: समाप्त हो जाएगी। मैं तो कहता हूँ यह बहुत सौभाग्य की बात है कि हम इस युग में हैं जहां हर आदमी अपनी कविता को प्रदर्शित तो कर सकता है। पहले तो यह लोगों तक पहुंच ही नहीं पाती थीं।

शुभोदय: आप गद्य और पद्य दोनों में समान रूप से लिख रहे हैं। जनमानस तक अपनी बात को पहुंचाने में किस माध्यम को सशक्त पाते हैं?

वी के सिंह: गद्य और पद्य दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र में विशेष हैं और दोनों का अपना-अपना महत्व है। किसी एक को दूसरे से कमतर या बेहतर नहीं कहा जा सकता। पद्य में रचना छोटी होती है किंतु वह दिल तक की यात्रा तेजी से पूरी करती है। जब यह पाठक के हृदय को स्पर्श करती है तो वह उसे याद रखता है, गुनगुनाता है और उद्धृत भी करता है। गद्य में आप कहानी, उपन्यास या निबंध लिखेंगे। उपन्यास का कलेवर बहुत बड़ा होता है। उसमें आप एक भाव तक सीमित नहीं रहते अपितु पूरी संस्कृति और सामाजिक संरचना को भी साथ ले सकते हैं। हर आदमी हर जीवन नहीं जी पाता किंतु गद्य के माध्यम से वह हर जीवन जी सकता है। वह नायक की तरह सोच सकता है, पीडित की पीड़ा को महसूस कर सकता है। अत: दोनों की अपनी अपनी महत्ता है और दोनों में संप्रेषण का अपना-अपना प्रभाव है।

शुभोदय: भारत में साहित्यिक पत्रिकाओं के प्रकाशन और अनुरक्षण को आप किस तरह आंकते हैं और इनकी तुलना में विदेशी साहित्यिक पत्रिकाओं को कहाँ पाते हैं?

वी के सिंह: जहां तक बाहर पत्रिकाओं के प्रकाशन की बात है तो मैं ऑस्ट्रेलिया के बारे में कह सकता हूँ कि डॉ. भावना कुंवर और प्रगीत कुंवर ऑस्ट्रेलियांचल नामक साहित्यिक

संपादक मंडल के साथ विजय कुमार सिंह

पत्रिका निकालते हैं और उसके लिए पूरी मेहनत करते हैं। कह सकते हैं कि विदेशों में भी हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाएं शुरू हो रही हैं यद्यपि उन्हें निकालने वाले भी भारतीय ही हैं। देश में साहित्यिक पत्रिकाओं के अनुरक्षण के बारे में मेरा मत है कि अब पेपर पत्रिकाओं का समय धीरे धीरे समाप्त हो रहा है। आगे से ई पत्रिकाएं ही रहेंगी। अब इंटरनेट का युग है, जो इंटरनेट पर होगा वही बचेगा। जहां तक भारत की बात है, तो भारत में भी जैसे आप लोग प्रयास कर रहे हैं और शुभोदय पत्रिका निकाल रहे है, जो काफी स्तरीय है, लेकिन मैं यह क हूँ गा जब तक यह प्रयास कोई व्यक्ति विशेष करेगा तब तक उसका भविष्य और निरंतरता मुश्किल है। ऐसी पत्रिकाएं व्यक्ति विशेष के बाद बंद हो जाती हैं। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं। यह एक सामूहिक प्रयास होना चाहिए और समूह को ही इसकी वित्तीय आवश्यकताओं की जिम्मेदारी लेनी चाहिए।

शुभोदय: इंटरनेट के युग में पुस्तकों की प्रासंगिकता पर आपकी संक्षिप्त टिप्पणी?

वी के सिंह: जब से इंटरनेट जैसी सुविधाएं आई हैं, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया हावी हुआ है, तब से पूरी दुनिया में जो किताबें पेपर पर छपती थी वह तो धीरे धीरे गायब हो रही है। मेरे देखते-देखते ऑस्ट्रेलिया और भारत में कई बुक स्टोर बंद हो गए हैं। अब ऑडियो एडिशन निकलने लगे हैं जिसमें आपको किताब पढ़ने की भी जरूरत नहीं पड़ती, आप उसे सुन सकते हैं। तो तकनीकी के साथ सब कुछ बदलता है और हमें उस बदलाव को स्वीकार करना चाहिए। इंटरनेट युग में किताबों का स्वरूप बदल रहा है। अब वे कागज पर नहीं डिजीटल पर चली गई हैं। तो किताबें प्रासंगिक रहेंगी किंतु उनका स्वरूप बदल जायेगा। इससे किताबों के छपने पर होने वाले व्यय में भी कमी आएगी और कागज के लिए पर्यावरण को जो नुकसान होता है, उससे भी हम बच सकेंगे।

शुभोदय: साहित्यिक संस्थाओं के समक्ष मौजूद आर्थिक या वित्तीय समस्या के निवारण पर आप क्या सुझाव देना चाहेंगे? अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इस समस्या से कैसे निपटा जाता है?

वी के सिंह: साहित्यिक संस्था एक आदमी से नहीं चल सकती। वैसे भी साहित्यिक अभिरूचि रखने वाले लोग प्राय: बहुत समृद्ध नहीं होते। व्यक्ति अपनी अभिरूचि और साहित्य जगत से संपर्क बनाए रखने के लिए यह कार्य करता है लेकिन किसी संस्था को सतत् रूप से चलाने के लिए एक व्यक्ति के प्रयास नाकाफी होते हैं। सामूहिक प्रयास, भले ही वे थोड़े-थोड़े हों, किसी संस्था की प्राणवायु होते हैं। साहित्यिक संस्थाएं हमारे समाज और सोच को दिशा देती हैं, इसलिए यह प्रत्येक जिम्मेदार व्यक्ति का कर्तव्य है कि इन्हें बनाए रखने के लिए वह सहयोग करें। यह सहयोग तन से, मन से और धन से किया जा सकता है। जिसके पास जो है वह उसी का सहयोग करे तो ये संस्थाएं चलेंगी और इसका लाभ हमें और समाज को मिलेगा।

शुभोदय: प्राय: यह कहा जाता है कि वैष्विक परिप्रेक्ष्य में हिंदी साहित्य अन्य वैश्विक भाषाओं के बराबर नहीं है, इस पर आपकी टिप्पणी?

वी के सिंह: देखिए वैश्विक परिप्रेक्ष्य में तो हिंदी साहित्य का अपना स्थान है, जो किसी भी अन्य भाषा के साहित्य से किसी भी तरह कम नहीं है। हमारे पास गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास, कबीर और जायसी जैसे साहित्यकार हैं जिनके समकक्ष बहुत कम साहित्यकार हैं। इसलिए यह कहना कि विश्व में हिंदी साहित्य किसी से कम है, सहीं नहीं है। तुलसीदास जी की रामचरित मानस को विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। उपन्यास विधा हमारे यहां बाद में आई तो उसके बारे में तो कहा जा सकता है कि वह अभी उतनी परिपक्व नहीं हुई है किंतु उसके अलावा हमारा साहित्य अत्यंत समृद्ध है और वैश्विक स्तर पर उसे उसी रूप में स्वीकार भी किया जाता है।

शुभोदय: आप किस रचनाकार से खुद को प्रभावित पाते हैं?

वी के सिंह: ऐसे तो हम जिस भी रचनाकार को पढ़ते हैं, उसका प्रभाव हमारी सोच और लेखन पर पड़ने लगता है लेकिन में तुलसीदास जी की विनय पत्रिका से बेहद प्रभावित हूँ।

शुभोदय: एक साहित्यकार के रूप में आप भारतीय समाज के भविष्य को किस रूप में देखते हैं?

वी के सिंह: हम लोग साहित्यकार हैं। हमारा काम है सृजन करना। सृजन ऐसा जो वास्तविक और आदर्शोन्मुखी हो। आदर्श वह है जो हम समाज को बनाना चाहते हैं और अपने समय को चित्रित करना तो साहित्यकार का धर्म है ही। हमें बस यह देखना है कि हम अपने काम को कितनी गंभीरता, लगन और निष्पक्षता से कर रहे हैं। हमारा काम भविष्य बताना नहीं है। कल हमसे सवाल पूछा जाएगा कि जब समाज में कुछ गलत हो रहा था तो आपने क्या किया। बस हम उसके लिए तैयार रहें कि हमने क्या किया। आज आपस में जो झगड़े और विवाद हो रहे हैं हमने उन्हें रोकने के लिए क्या किया। अगर हम साहित्यकार हैं तो हम पर भी लोग उंगली जरुर उठाएंगे। यह देश हम सबका है। हम इसके प्रति संवेदनाशील रहें कि हम अपने समय को कैसे चित्रित कर रहे हैं। हम इस जिम्मेदारी से बच नहीं सकते और अगर हम बच रहे तो हम साहित्यकार नहीं हैं।

शुभोदय: शुभोदय के पाठकों और नवांकुर साहित्यकारों को आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

वी के सिंह: नवांकुर साहित्यकारों से मैं यही बात कहूंगा कि जितना पढ़ सकते हैं, उतना पढ़िए क्योंकि कलम हाथ में लेकर बात नहीं बनती। जितना ज्यादा आपका ज्ञान और अनुभव होगा, जितना ज्यादा आपका अध्ययन होगा, आप उतना ही अच्छा लिख पाएंगे। अध्ययन के बाद आप उससे बेहतर लिख पाएंगे जो आप लिख रहे हैं। पाठकों के लिए कहूँगा कि शुभोदय के नए लेखकों और रचनाकारों का उत्साह बढ़ाते रहें। पत्रिका के संपादक मंडल को और लेखकों को अपनी पाठकीय प्रतिक्रिया देते रहें। इससे उन्हें उर्जा मिलती है और वह पहले से बेहतर करने के लिए तत्पर रहते हैं।

विजय रंजन
अयोध्या-उत्तर प्रदेश
मो.: 8874830492

आलेख

वसन्त पंचमी के निहितार्थ

माघ शुक्ल पंचमी या वसन्तपंचमी का दिन देवी भारती/सरस्वती का अवतरण दिवस है। देवी सरस्वती/भारती के अवतरण का दिवस होने के कारण **वसन्तपंचमी का सांस्कृतिक सन्देश** है जो मिथकीय या काल्पनिक नहीं है। वसन्तपंचमी का सन्देश एकदिनी महत्त्व का भी नहीं है क्योंकि देवी सरस्वती के सद्संस्कारी गुण-धर्म मानव एवं सम्पूर्ण मानव-समाज को सात्त्विकता ज्ञान, विद्या, साहित्य, संगीत, कला, विद्या, सद्भाव, सर्वकल्याणकता और शान्ति आदि से आभरित करने में समर्थ हैं।

कहते हैं कि सृष्टि-निर्माण के उपरान्त अपनी विनिर्मिति को निर्वाक्, अज्ञानी और नितान्त तमस्शील देख कर ब्रह्मा जी बहुत निराश हुए थे। तब श्री विष्णु और सदाशिव महादेव से परामर्श और शक्ति अर्जित करके सृष्टि-सर्जक ब्रह्मा जी ने अपनी तत्कालीन निर्वाक् तमसशील प्रकृति वाली सृष्टि को सवाक्, सत्त्वशील और ज्ञानार्थी बनाने के लिए अपने कमण्डल के जल को दाएँ हाथ में लेकर मनसा-मंत्रोच्चारण सहित पृथ्वी पर छिड़क दिया। पृथ्वी पर गिरते ही उन जल-बूँदों से एक दिव्य, भव्यस्वरूपा, सत्त्वस्वरूपा, योगज मुद्रा वाली, श्वेतवस्त्रावृता, श्वेत पद्मासना 'देवी' अवतरित हुईं। अवतरित देवी के एक हाथ में पुस्तक, एक में स्फटिक की माला और दो हाथों में वीणा थी। उनके अवतरित होते ही ब्रह्मा जी की सृष्टि के जीव अपनी आत्मा के चैतन्य के समानुपात में सस्वन, सस्वर या कि सवाक् हो गए। उसी समानुपात में वे बुद्धिशील, ज्ञानशील भी हुए। यह दैवीय सत्ता जब ज्ञानान्वेषण में रत होती है, जब वह ज्ञान, शान्ति, योग, संगीत, कला, साहित्य आदि की साधना में निरत रहती है, तब 'देवी भारती' कहलाती है और जब वही दैवीय इयत्ता ज्ञान, शान्ति, योग, संगीत, कला, साहित्य, विद्या आदि की साधना के प्रदान में और/या तद्गत संस्कारों के प्रदान-प्रसार में निरत होती है, तब 'देवी सरस्वती' कहलाती है। भारतीय मान्यताओं के अनुसार सर्वथा सात्त्विक सर्जनापरकता, शान्ति, ज्ञान, नय, ऋत, विद्या, अध्यात्म, धर्मालुता आदि की अधिष्ठात्री देवी हैं देवी सरस्वती/भारती। उपरि इंगित दैवीय स्वरूपों (देवी भारती, देवी सरस्वती) के अतिरिक्त ऋक् में ही सरस्वती नाम की नदी को भी शब्दांकित किया गया है। ऋक् में नदीतमा भी कहा गया है इस नदी को। तथ्यतया सरस्वती नदी के तट पर देवी भारती के भारतीत्व से या कि देवी भारती के संस्कारों से, तद्गत गुणों से सहयुजित हुए थे हमारे ऋक्युगीन आर्ष मनीषी। आर्षजन ने ज्ञानार्चा का आरम्भ करके सरस्वती-तट से ही आर्ष/वैदिक/सनातन सभ्यता एवं संस्कृति का आरम्भ किया था। कहना अनावश्यक नहीं कि ऋक् युग से ही हम भारतीत्व से सहयुजित/संयुजित हैं और इसीलिए, हाँ केवल और केवल इसीलिए 'भारती$य' या कि 'भारतीय' हैं हम !

कबीलाई युग से आगे बढ़ने पर सभ्यता एवं संस्कृति के विकास के आरम्भिक चरण में ही जम्बूद्वीप के भरतखण्ड के आसेतु हिमालय कंधार से कामरूप तक विस्तृत भारत में मनीषियों ने ज्ञान की खोज करते-करते अग्नि की अर्चना आरम्भ की। "ओ३म् अग्निमीले....." ऋक् के प्रथम मण्डल की प्रथम ऋचा है। अपनी अर्चना-यात्रा में अग्नि के बाद इन्द्र, विष्णु, वरुण, अश्विनी कुमार और रुद्र की अर्चना की। प्रतीतया ज्ञानार्ची मनीषी आर्यजन इन देवों की अर्चना से सन्तुष्ट नहीं हुए, इसलिए कि अग्नि अनियंत्रित होने पर ताण्डवकारी हो जाती है और तब अग्निदेव सर्वभक्षी/सर्वभस्मी भी बन जाते हैं। इन्द्र आनन्दवादी हैं और भोग के प्रति ललकित रहते हैं। जयशंकर प्रसाद ने भी इन्द्र के आनन्दवादी होने का इंगित किया है। आनन्दवाद बुरा नहीं है किन्तु वह उसी सीमा तक स्वीकार्य है, जहाँ तक वह प्रज्ञाजन्य 'सत्$चित्$आनन्द

के पूर्ण ब्राह्मिक स्वरूप वाले ब्रह्मानन्द' से सहयुजित रहे। इन्द्रिय भोगजन्य आनन्दवाद अस्वीकार्य है क्योंकि यह सर्वदा अधोगामी ही होता है। इसीलिए, कालान्तर में युग-युग के प्रकाण्ड विद्वान् मनीषी श्रीकृष्ण ने द्वापर में इन्द्र की पूजा को निषेध्य घोषित कर दिया। ब्रह्म के सच्चिदानन्द स्वरूप को समवेत में पाने के आकांक्षी आर्यजन को भौतिक 'आनन्द' मात्र की प्राप्ति एकांगी प्रतीत हुई। ऋक् युग में ही इन्द्र के बाद विष्णु की अर्चना के अर्चक हो गए आर्यजन। सर्वपोषक होने के बावजूद श्री विष्णु भी प्रायः रजस्शील हो जाते हैं। दूसरी ओर, वरुण का अधिकार क्षेत्र 'जल' तक सीमित है। नैतिक अनुशासन की कठोरता भी है वहाँ और उतनी कठोरता आनन्दवादियों को स्वीकार नहीं रही होगी। वहीं, रुद्र तो रुद्र ही हैं। अमर्ष, क्रोध ....प्रचण्ड क्रोध नैसर्गिक स्वभाव है रुद्र का। ऐसे में सत्त्वशील प्रकृति के शान्तिकामी ज्ञानार्थी आर्यजन ने अंततः विद्या, सात्त्विक ज्ञान, संगीत, कला, योग, शान्ति आदि की सतत अर्चना में निरत और पावनता, दैवीयता, सदाचार, 'सकारात्मक दकारत्व के आचार' अर्थात् 'सकारात्मक दया, दान, दम/दमन के आचार' की साक्षात् मूर्ति, सर्वकल्याण एवं तितिक्षा (दया, उदारता, सहिष्णुता) की देवी भारती की प्रकृति, प्रवृति को स्वयं के अनुकूल पाकर देवी भारती की उपासना (उप$आसना=उपास्य के निकट बैठकर उसके गुणों का स्मरण, चिन्तन-मनन और मनसा, वाचा, कर्मणा उसे आचरित करने का संकल्प लेना) तो प्रारम्भ की ही, साथ ही भारतीत्व को मनसा-वाचा-कर्मणा अपनाना भी आरम्भ कर दिया। कालान्तर में "आ....भारतीभिः' की आराधना करते-करते भारतीत्व अर्थात् देवी भारती के गुणों को पूरी तरह मनसा-वाचा-कर्मणा आत्मसात् कर लेने पर 'जानति तुम्हहि तुम्हहि होई जाई' के समानुरूप समस्त आर्यजन "भारती तत्र सन्ततिः भारती यत्र प्रजाः" से आगे बढ़ कर "भरतः आदित्यः तस्य भा भारती" की उत्कर्षपूर्ण स्थिति में जा पहुँचे।

बताते चलें कि देवी सरस्वती (या कि देवी भारती) की प्रकृति-परास के अनुशीलन-क्रम में उल्लेख्य हैं 'ऋग्वेद', 'सामवेद', 'ब्रह्मवैवर्तपुराण', 'वायु पुराण', 'मार्कण्डेय पुराण' , 'वृहद्धर्मपुराण', 'देवी भागवत्', 'दुर्गासप्तशती', 'बृहदारण्यक' उपनिषद् आदि हमारे अनेक वाङ्मय। 10,000 वर्षों से अधिक प्राचीन माने जाने वाले वैदिक ग्रंथ 'ऋग्वेद' सहित अन्यान्य भारतीय वाङ्मय में देवी सरस्वती/भारती के सत्त्वशील, सर्जनाशील, नयशील, ऋतशील, सत्-शिव-सुन्दरम् गुणों का रूपायन है। ऋग्वेद (प्रथम मण्डल/3/30) में कहा गया है--- 'महो अर्णः सरस्वती प्रचेतयति केतुना। धियः विश्वाः विराजति।' (सरस्वती ज्ञान से जगत् रूपी महासागर की गह्वरता का बोध कराती हैं, समस्त बुद्धियों को प्रकाशित करती हैं)। ऋक् 2/3/8 में कहा गया है--- "सरस्वतीः साध्यन्ति धियं न इड़ा" (इड़ा या इला नहीं बल्कि सरस्वती बुद्धि का विकास करती हैं)। ऋग्वेद के अष्टम् मण्डल में कहा गया है- "धियो विप्रः अजायत।" (सरस्वती की कृपा से प्राप्त बुद्धि से मनुष्य 'विप्रत्व' प्राप्त कर 'विप्र' अर्थात् 'विशिष्ट प्रज्ञान युक्त ज्ञानी' बनता है। 'विप्रत्व' वस्तुतः 'सद्संस्कारों को अभ्यास/व्यवहार में अंगीकार एवं रूपायित करने वाले विप्र के आचार' होते हैं।"जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते, अभ्यासेन विप्रः, ब्रह्म जानाति स ब्राह्मणः " से देवी सरस्वती द्वारा साधक के हृदय में 'विप्रत्व' झंकृत या कि उत्पन्न करने की पुष्टि होती है। 'ब्रह्मवैवर्तपुराण' के अनुसार सरस्वती-पूजा से मूर्ख भी पण्डित हो जाता है- 'आदौ सरस्वतीपूजा श्रीकृष्णेन विनिर्मिता, यत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ मूर्खोभवति पण्डितः।'

'वृहद्धर्मपुराण' के अनुसार ब्रह्मा ने सरस्वती को कविता-शक्ति बनने का वरदान दिया था--" भवतु कविताः शक्ति कवीनाम् वदनेषु।" बृहदारण्यक-कार देवी सरस्वती/भारती को वाक् रूप में सर्वव्याप्त बताते हैं। यास्क उन्हें 'आदित्य भरतः तस्य भा भारती' बताते हैं। जैन मत में देवी सरस्वती 'संरचना की देवी' और 'वाग्देवी' के रूप में पूज्य हैं। बौद्ध उन्हें 'नीलदेवी' के रूप में पूजते हैं। वे महायान के उत्तर चरण से तंत्र की देवी के रूप में बौद्ध धर्म में पूजित हैं।

तथ्यतया देवी सरस्वती की सत्त्वशीलता, ज्ञान-प्रदान प्रभृति अवदान ऐसे हैं कि वैदिक वाङ्मय ही नहीं, अपितु वाल्मीकि, कालिदास, माघ, सुबंधु, राजशेखर, अभिनव गुप्त से लेकर भारतविद् विलियम जोंस, हिन्दी जगत् के 'बीसलदेव रासउ' के रचयिता कवि नरपति नाल्ह, कविश्रेष्ठ तुलसीदास, अधुना प्रगतिशील कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' आदि प्रायः सभी मनीषी कवि 'कविता-आविर्भाव' हेतु देवी सरस्वती/भारती की कृपा जोहते हैं। अद्यतन समस्त विज्ञजन देवी सरस्वती की आराधना करते आए हैं।

देवी सरस्वती/भारती के चित्र को देखें-- श्वेतवस्त्रधारी, शुभ्रानना देवी सरस्वती/भारती श्वेेताभ शतदलीय कमल पुष्प पर कमलासन में सत्त्वगुणोन्मुखी योगमुद्रा ब्राह्मी में विराजमान हैं। आर्यों/हिन्दुओं के अन्यान्य देवी-देवता जहाँ अस्त्र-शस्त्रधारी भी हैं; वहीं, चतुर्भुजी सरस्वती/भारती देवी के एक हाथ में सत्त्व साधना एवं भक्ति की प्रतीक स्फटिक माला, दो हाथों में वीणा और एक हाथ में पुस्तक--- मात्र इतना ही दृश्यमान है। देवी सरस्वती/भारती के समीप ही उनका वाहन श्वेत राजहंस विद्यमान रहता है। वह भी नीर-क्षीर विवेकी और सत्त्वशील है। देवी सरस्वती/भारती के श्वेतवस्त्र, श्वेेत कमल पुष्प का आसन, कमलासन में ब्राह्मी योगद मुद्रा और कुमुदिनी विनिर्मित माला-धारण-- सभी उनकी सत्त्वशीलता और उनकी सत्त्वगुणोन्मुखी प्रवृत्ति का प्रतीक हैं। उनके हाथ की पुस्तक ज्ञान का, वीणा उनकी स्वरसाधना, संगीतप्रियता एवं सतत जीवन्त सात्त्विक रागात्मकता का प्रतीक है।

और, देवी सरस्वती की मुद्रा अति महत्त्वपूर्ण है उनकी ब्राह्मी मुद्रा। कमलासनी ब्राह्मी मुद्रा में ऊर्जा तरंग मूलाधार चक्र से लेकर सहस्त्रार चक्र तक अविश्रृंखलित होकर पैर के नख से लेकर सिर की शिखा तक सम्पूर्ण तन-मन को ऊध्वरेतः कर सत्त्वशील कर देती है जिससे कमलासनी ब्राह्मी मुद्रासीन योगसाधक के विचार, बुद्धि, विवेक सभी सात्त्विक हो उठते हैं फलतः उसकी ललाट-दीप्ति, मुख-दीप्ति और सम्पूर्ण शरीर की आभा देदीप्यमान होती रहती है जिसमें सत्त्वशीलता की आभा झलकती है। स्फटिक की माला और कुमुदिनी के हार से भी विचार सत्त्वशील और विश्रान्तिजनक हो उठते हैं। इनकी मालाओं के धारणकत्ता में सत्त्वोन्मुखता शनैः-शनैः प्रस्तारित होती जाती है। फलतः एक विशिष्ट आभा छा जाती है इन्हें धारण करने वाले साधक/साधिका के मुखमण्डल पर।

जहाँ तक देवी सरस्वती/भारती की वीणा का प्रश्न है, उनकी वीणा का नाम विपंची है। देवी की वीणा के कच्छपाकार होने के ब्याज से महर्षि नारद उसे 'कच्छपी' कहते हैं। वीणा सत्त्वोन्मुखी स्वर के झंकार का वाद्ययन्त्र है। विपंची वीणा के सत्त्वोन्मुखी स्वर का साक्ष्य 'शतपथ ब्राह्मण', 'सुधाकलश', 'वाजसनेयी संहिता', 'संगीतोपनिषद्', 'सारोद्धार' आदि मे उल्लिखित है। 'विपंची' 9 तार की वीणा है। विपंची के 9 तारों में से प्रथम सात तार संगीत के सात सुरों ख् स (षड्ज), रे (ऋषभ), ग (गांधार), म (मध्यम्), प (पंचम्), ध (धैवत्), नि (निषाद्), के प्रतीक हैं जबकि आठवाँ तार आधिभौतिकता का तथा नवाँ तार आधिदैविकता का प्रतीक है। संगीत के सुरों के प्रतीक सात तारों में प्रथम तार षड्ज 'योग-साधना' की षट्क सम्पत्ति (शम, दम, श्रद्धा, आस्था, तितिक्षा और समाधान) का भी प्रतीक है। देवी सरस्वती/भारती विपंची वीणा को केवल धारण ही नहीं करतीं , वरन् उसके 9 निर्जीव तारों से आकर्षक, सत्त्वोन्मुखी सबल सुर (स्वर) सुझंकृत एवं प्रस्तारित कर स्वर-साधना करती हैं वे। विपंची के सभी 9 तारों पर पूर्ण नियंत्रण है देवी सरस्वती/भारती का। इस तरह संगीत सुरों की साधना के माध्यम से आधिभौतिकता से आधिदैविकता तक की साधना-यात्रा निष्पन्न करती हैं देवी सरस्वती।

देवी सरस्वती केवल भारत में ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में किसी न किसी रूप में उपास्य हैं। जापान में देवी बेंजाइतेन, सामी जगत् के अरब में देवी इन्हेंदुआना एवं अल-मनात, इटैलियन जगत् में देवी फेमिना, चीन में देवी नीला/नीलसरस्वती और तिब्बत में महासरस्वती, वज्रशारदा, वज्रसरस्वती, ब्रिटेन और अनेक यूरोपीय देशों में 3 म्यूजेस देवियों के रूप में और यूनान में सैफो, एथेंस में एथेना, डोरोसियस के रूप में पूजित हैं देवी सरस्वती। वैदिक युग में तो सरस्वती एवं भारती स्वरूपों में पूज्या हैं ही वे, त्रेता में भी राक्षसजन और आर्यजन दोनों ही संवर्ग 'कुल देवी' के रूप में 'देवी भारती/सरस्वती के अपर रूपों' की आराधना करते रहे हैं। राक्षसगण कुम्भिला देवी सदृश देवी स्वरूपों की आराधना करते थे। अयोध्या-फैजाबाद की छोटी देवकाली मन्दिर में सीता की कुल देवी और बड़ी देवकाली मन्दिर में श्री राम की कुल देवी की मूर्तियाँ स्थापित हैं, जो वहाँ देवी काली, देवी महाकाली के भयावह रूप के बजाय सौम्य रूप की 'कुल देवी' के रूप में विराजमान हैं। ये कुल देवियाँ त्रेता युग में कोसल से मिथिला तक आभारत प्रवृत्तमान होने के प्रमाणक हैं।

प्रसंगित 'क्यों' का कारक/कारण सम्मादिट्ठि से तलाशें तो अनुमानित किया जा सकेगा कि देवी भारती/सरस्वती की आराधना भले ही प्रकर्षदायिनी हो, लेकिन उस आराधना-साधना में 'इन्द्रिय-निग्रह' या

कि 'इन्द्रिय-दमन' अपेक्षित होता है। दूसरी ओर, उपनिषदों के अनुसार और अधुनामनोविज्ञान के अनुसार भी मानव-मन स्वयमेव वासनापरकता (तमस्शीलता) की ओर भागता है। द्वितीयतः मानव-जनसंख्या का बहुलांश रजस्शील और अल्पांश सबल तमस्शील होता है। वे दोनों भी सत्त्व की आराधना को बाधित ही करते हैं। फलतः ऋक् युग, त्रेतायुग तक, कलियुग में शकारि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, गुप्त वंश और राजा भोज के काल तक देवी सरस्वती की साधना में निरत रहने वाले हम भारतीय भी जब-तब अवसर पाते ही देवी भारती/सरस्वती से विमुख होते गए। वर्तमान में आविश्व जो तामसिक परिवेश है, उसमें आज का अधिकांश 'भारतीय' भी प्रतीततया उसी परिपाटी में भौतिकतावादी चाक-चिक्य में उलझ कर रह गया है। वह उस परिवेश की तमस्शीलता से पूरी तरह से आभावित भले न हो, लेकिन तामसी राग-द्वेष में निरत हो गया है। आज वह दिग्भ्रमित भी है और अशान्त भी। फलतः वर्तमान में शान्ति, योग, संगीत, कला, साहित्य, धर्म आदि के वस्तुनिष्ठ स्वरूपों को भुला बैठा है। तभी तो वसन्तोत्सव के उल्लास को भी प्रकृत स्वरूप में अनुभूत करने में असमर्थ है वह। बहुलांश भारतीय अपनी रजस् और तमस्शीलता के प्रभाव में देवी सरस्वती/भारती की सात्त्विक अर्चना के पर्व: 'वसन्तपंचमी/वसन्तोत्सव' सदृश सात्त्विक पर्व को 'कामाराधना' के पर्व के रूप में देख रहा है। आज वह सात्त्विक सर्जनात्मकता का सन्देश देने वाली देवी सरस्वती/देवी भारती को ही बिसारे दे रहा है। इसीलिए दीर्घकालिक वसन्तोत्सव और सरस्वती की पूजा को एकदिनी वसन्तपंचमी पर्व तक समेट लाया है वह। इतना ही नहीं, देवी सरस्वती की पूजा-अर्चना को भी उसने कतिपय स्थलों पर शिक्षालय में प्रवेश लेने के अवसर पर की जाने वाली पूजा तक या कि सारस्वत कार्यक्रमों में देवी सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण करने तक समेट दिया है। ऐसे में आज देवी सरस्वती/भारती की वैदिक आराधना को व्यापक रूप में पुनः प्रवर्तित करना/कराना अति आवश्यक हो गया है।

समीचीन है यहीं यह बताना भी कि अथर्ववेद में कहा गया है 'वयम् राष्ट्रे जागृयाम् पुरोहिताः'। इसका निहितार्थ है कि हम (समस्त कवि, लेखक, प्रबुद्ध जन और वस्तुनिष्ठ धर्मनिष्ठ जन) राष्ट्र-जागरण के पुरोहित हैं, तदेव, राष्ट्र-जागरण का दायित्व तो हमें निबाहना ही चाहिए। इस पर्युत्सुकी भाव का निदेशन महाकवि कालिदास भी करते हैं और अधुना महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' भी। 'निराला' की देशना है- "करना होगा (हमें) तिमिर पार" और इससे भी आगे बढ़ कर कहते हैं वे- "मैं वसन्त का अग्रदूत।" 'निराला' देवी सरस्वती की उपासना में गीत भी रचते हैं- "वर दे, वीणा-वादिनी वर दे।" निश्चितरूपेण 'निराला' वसन्त के मादन भाव के अग्रदूत बनने की नहीं, वरन् वासन्तिक सात्त्विक सर्जनाशीलता का सन्देश प्रसारित करने के लिए वसन्त का अग्रदूत बनना चाहते हैं। हमारा बौद्धिक संवर्ग अब भी अपनी अन्तरात्मा से भारत और भारती की ही जय-विजय का आकांक्षी है, किन्तु वह रजस् तमस्शील युगबोध में अपने अन्तर्मन में पैठी सारस्वत भावना को अनदेखा कर रहा है। अतएव, अथर्ववेदकार से लेकर 'निराला' तक के अन्तःनिहित एवं प्रकट निदेशनों को जन-जन में परवान चढ़ाने के लिएं सम्पूर्ण राष्ट्रचेता प्रबुद्ध जन को देवी सरस्वती की सम्यक् आराधना के प्रति इच्छा, ज्ञान, क्रिया के संस्तरों पर मनसा-वाचा-कर्मणा निष्ठावान् होना होगा। काश ! वैदिक ऋषिगण, श्रीकृष्ण, शकारि विक्रमादित्य और राजा भोज की परम्परा में पुरोहित धर्म का सम्यक् निर्वाह करते हुए सारस्वत सर्जनात्मकता की आराधना को मनसा-वाचा-कर्मणा साकारित करके वसन्त का अग्रदूत बन कर राष्ट्र का प्रकर्षदायक जागरण हमारे सत्त्वशील पुरोधा कवि, लेखक वर्षपर्यन्त करें। अपने-अपने संस्तर से वे सम्पूर्ण राष्ट्र को देवी सरस्वती/देवी भारती की आराधना की ओर वस्तुनिष्ठतया उन्मुख करें। हमें कभी विस्मृत करना नहीं चाहिए कि देवी सरस्वती/देवी भारती का सारस्वतत्त्व/भारतीत्व ही हमारे राष्ट्रीय चरित्र की पहचान है। प्रकटतः प्रतिवर्ष आकर वसन्तक/नववसन्तक अपनी हुलास भरी टिहुनी से टहोका लगा कर बार-बार हमें इसीलिए चेताता है कि हम 'वसन्त के सत्त्वशील सर्जनात्मक हुलास को सात्त्विक सारस्वत स्वरूप में मनसा-वाचा-कर्मणा अपना कर वसन्तोत्सव की आर्ष परम्परा को अपनाएँ ; तत्सम्बन्धी 'आसुरी' और 'रजस्शील' परम्पराओं का हम परित्याग करें; औ...र जो लोग 'भारतीय' से 'इण्डियन' या 'हिन्दोस्तानी' बन गए हैं, वे भी अपनी मूल 'भारतीयता' की ओर लौट आएँ। काश ! हम बसन्तपंचमी के निहितार्थों को प्रकृति के वास्तविक टहोका को सकारात्मक स्वरूप में अनुभूत कर सकें।

प्रो. महावीर सरन जैन
बुलन्दशहर -उत्तर प्रदेश
मो. 9971839177

आलेख

भारतीय भाषाएँ एवं भाषिक प्रौद्योगिकी

भविष्य में, संसार में वे भाषाएँ ही टिक पाएँगी जो भाषिक प्रौद्योगिकी की दृष्टि से इतनी विकसित हो जायेंगी जिससे इन्टरनेट पर काम करने वाले प्रयोक्ताओं के लिए उन भाषाओं में उनके प्रयोजन की सामग्री सुलभ होगी।

सूचना प्रौद्यौगिकी के संदर्भ में भारतीय भाषाओं की प्रगति एवं विकास के लिए, मैं एक बात की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। व्यापार, तकनीकी और चिकित्सा आदि क्षेत्रों की अधिकांश बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने माल की बिक्री के लिए सम्बंधित सॉफ्टवेयर ग्रीक, अरबी, चीनी सहित संसार की लगभग 30 से अधिक भाषाओं में बनाती हैं मगर वे हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं का पैक नहीं बनाती। मेरे अमेरिकी प्रवास में, कुछ प्रबंधकों ने मुझे इसका कारण यह बताया कि वे यह अनुभव करते हैं कि हमारी कम्पनी को हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं के लिए भाषा पैक की जरूरत नहीं है। हमारे प्रतिनिधि भारतीय ग्राहकों से अंग्रेजी में आराम से बात कर लेते हैं अथवा हमारे भारतीय ग्राहक अंग्रेजी में ही बात करना पसंद करते हैं। उनकी यह बात सुनकर मुझे यह बोध हुआ कि अंग्रेजी के कारण भारतीय भाषाओं में वे भाषा पैक नहीं बन पा रहे हैं जो सहज रूप से बन जाते। हमने अंग्रेजी को इतना ओढ़ लिया है जिसके कारण न केवल हिन्दी का अपितु समस्त भारतीय भाषाओं का अपेक्षित विकास नहीं हो पा रहा है। जो कम्पनी ग्रीक एवं अरबी में सॉफ्टवेयर बना रही हैं वे हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं में सॉफ्टवेयर इस कारण नहीं बनातीं क्योंकि उनके प्रबंधकों को पता है कि उनके भारतीय ग्राहक अंग्रेजी मोह से ग्रसित हैं। इस कारण हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रौद्योगिकी पिछड़ रही है।

इस मानसिकता में जिस गति से बदलाव आएगा उसी गति से हमारी भारतीय भाषाओं की भाषिक प्रौद्योगिकी का भी विकास होगा। हिन्दी, बांग्ला, तेलुगु, मराठी, तमिल जैसी भारतीय भाषाओं की सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के लिए कम से कम विदेशी कम्पनियों से भारतीय भाषाओं में व्यवहार करने का विकल्प चुने। उनको अपने अंग्रेजी के प्रति मोह का तथा अपने अंग्रेजी के ज्ञान का बोध न कराए। जो प्रतिष्ठान आपसे भाषा का विकल्प चुनने का अवसर प्रदान करते हैं, कम से कम उसमें अपनी भारतीय भाषा का विकल्प चुने। आप अंग्रेजी में दक्षता प्राप्त करें – यह स्वागत योग्य है। आप अंग्रेजी सीखकर, ज्ञानवान बने – यह भी 'वेल्कम' है। मगर जीवन में अंग्रेजी को ओढ़ना बिछाना बंद कर दें। ऐसा करने से आपकी भाषाएँ विकास की दौड़ में पिछड़ रही हैं।

भारत में, भारतीय भाषाओं को सम्मान नहीं मिलेगा तो फिर कहाँ मिलेगा। इस पर विचार कीजिए। चिंतन कीजिए। मनन कीजिए।

०००

रिंकल शर्मा
गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो. 9810464048

आलेख

"लुप्त होती साँग कला में जान फूँकती फ़िल्म – "हप्पन सांगवाला"

अभी हाल ही में यूट्यूब पर निर्माता रवि यादव द्वारा निर्मित एक बेहतरीन फ़िल्म रिलीज हुई – 'हप्पन सांगवाला' जोकि दर्शकों और आलोचकों दोनों को ही खूब प्रभावित करने का दम रखती है।

'हप्पन सांगवाला' सुनील प्रेम व्यास द्वारा निर्देशित एक शानदार शॉर्ट फिल्म है जो आपके दिल को छू लेगी। यह फिल्म वैसे तो हिन्दी भाषा में बनी है, लेकिन इसकी कहानी और संदेश इतना व्यापक है कि इसे देश के हर कोने में पहुंचाया जाना चाहिए।

चूँकि यह फिल्म भारतीय लोक कला 'साँग' पर आधारित है तो फ़िल्म देखने और समझने से पहले 'साँग' को जानना बहुत ज़रूरी है।

साँग एक ऐसी लोक कला है जो भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का प्रतीक रही है। यह न केवल मनोरंजन का एक माध्यम है, बल्कि यह सामाजिक संदेश देने और पारंपरिक कलाओं को संरक्षित करने का भी एक माध्यम है। यह मुख्यतः उत्तर भारत, विशेषकर हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में प्रचलित है। साँग, संगीत, नृत्य, अभिनय और हास्य का एक अद्भुत संगम है जो दर्शकों को भरपूर मनोरंजन प्रदान करता है। साँग हमेशा किसी न किसी लोक कथा या ऐतिहासिक घटना पर आधारित होते हैं। इनमें प्रेम, वीरता, धर्म और समाज के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया जाता है। साँग के माध्यम से सामाजिक संदेश भी दिए जाते हैं और समाज में व्याप्त कुरीतियों और बुराइयों की निंदा भी की जाती है। साँग में विभिन्न प्रकार के लोक संगीत और नृत्य का प्रयोग किया जाता है। संगीत के माध्यम से भावनाओं को व्यक्त किया जाता है। इसमें ढोल, ढप और अन्य पारंपरिक वाद्ययंत्रों का उपयोग संगीत के लिए किया जाता है।

साँग में हास्य का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है। हास्य कलाकार (नकली) अपनी बुद्धिमानी और चुटकुलों से दर्शकों को हंसाते हैं। साँग के कलाकार विभिन्न प्रकार की भेषभूषा पहनते हैं, जो उनके

किरदारों को और अधिक जीवंत बनाती है। साँग की उत्पत्ति के बारे में निश्चित रूप से तो कुछ नहीं कहा जा सकता है, लेकिन माना जाता है कि साँग को लोक कलाकारों द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाया गया है। ऐसे लोक कलाकारों में 'लक्ष्मीचंद' को साँग का पितामह कहा जाता है। उन्होंने साँग को एक नए आयाम पर पहुंचाया और इसे एक लोकप्रिय कला बनाया। लक्ष्मीचंद के बाद उनके शिष्य भाँगेराम और तुलेराम ने भी साँग के विकास और लोकप्रियता बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

मगर आज के समय में साँग लोक कला को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। बदलते समय के साथ लोगों के रुझान भी बदल रहे हैं। युवा पीढ़ी अब साँग की ओर उतना आकर्षित नहीं होती जितनी पहले होती थी। जिसका एक कारण तो शायद कम आमदनी है और दूसरा टेलीविजन और इंटरनेट जैसे अन्य माध्यमों की बढ़ती लोकप्रियता। ऐसे समय में फ़िल्म 'हप्पन सांगवाला' लुप्त होती इस लोक कला में फिर से जान फूँकने का काम करती है।

'हप्पन सांगवाला' फ़िल्म की कहानी लुप्त होती साँग कला के कलाकारों के दर्द को उकेरती है। जिस तरह साँग की कथा ही उसकी जान होती है, दर्शकों को बांधे रखती है और उन्हें भावुक बनाती है। उसी तरह इस फिल्म की कहानी बहुत ही मार्मिक, लोक कला के प्रति समर्पण की भावना से भरपूर और अंत तक दर्शकों को बांधे रखने में सफ़ल होती है। इस फ़िल्म में साँग के साथ-साथ, दादा-पोते के रिश्ते और नई पीढ़ी द्वारा, नई तकनीक के माध्यम से पुरानी कला को फिर से नया जीवन देने की कोशिश को बख़ूबी दर्शाया गया है। फ़िल्म में प्रसिद्ध अभिनेता राजेंद्र यादव ने हप्पन सांगवाला के किरदार को बहुत ही शानदार तरीके से निभाया है। फ़िल्म में उनके हाव-भाव और उनकी शैली दर्शकों को प्रभावित करती है। पोते के किरदार में निर्भय ठाकुर अपनी मासूमियत से दर्शकों का मन मोहने में सफ़ल रहे हैं। साथ ही केशव साधना, विनय कुमार, रतन भारती और विदुषी यादव ने भी बेहतरीन अभिनय किया है। फ़िल्म का संगीत, साँग कला को जीवंत करता हुआ दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर देता है। फ़िल्म के दृश्य जिनमें हप्पन फिर से साँग का मंचन करता है और अपनी कला को फिर से जीता है, बेहद प्रभावशाली और भावुक करने वाले हैं। फिल्म की सिनेमैटोग्राफी बेहद खूबसूरत है। गाँव के प्राकृतिक दृश्य कैमरे में बेहद खूबसूरती से कैद किए गए हैं।

अगर आप कम समय में एक ऐसी फिल्म देखना चाहते हैं जो आपको भावुक करे और अपने देश की संस्कृति से आपको जोड़े तो 'हप्पन सांगवाला' आपके लिए एक बेहतरीन विकल्प है। इस फिल्म में अभिनेता राजेंद्र यादव के अभिनय को देखना, गाँव के खूबसूरत दृश्यों से सजी शानदार सिनेमैटोग्राफी को देखना, साँग कला और उसके संगीत को करीब से महसूस करना और आपके लिए एक यादगार अनुभव होगा क्योंकि 'हप्पन सांगवाला' सिर्फ एक फिल्म नहीं है, बल्कि एक अनुभव है।

०००

अमित गुप्ता
कोलकाता-पश्चिम बंगाल
मो. 9831836827

आलेख

विश्व की भाषाओं के बीच हिन्दी

सभ्यता के आदि काल में जबसे मनुष्य ने एक दूसरे से वस्तु के स्थान पर वस्तु का आदान प्रदान करना आरंभ किया, तबसे लेकर आज तक मनुष्य को परस्पर संवाद के लिए भाषा की आवश्यकता पड़ी है, चाहे वो संकेत की भाषा ही क्यूँ न रही हो। संकेतो से शुरू होकर कालांतर में ध्वनियों ने शब्दों का और शब्दों नें भाषा का रूप लिया और मानव के परस्पर संवाद का माध्यम बने । विश्व भर में हजारों भाषाओं और लाखों बोलियों ने जन्म लिया और पूरी मानव जाति को आपस में जोड़ने और बांधने का काम किया और आज तक कर रही हैं । तबसे अब तक भाषा के स्वरूप में भी अनेकों परिवर्तन आए हैं।

आज पूरे विश्व के 195 देशों में 7139 भाषाएँ प्रयोग की जा रही हैं। हमारे अपने देश , भारत में , 122 प्रमुख और लगभग 1599 अन्य भाषाएँ और बोलियाँ प्रयुक्त हो रही हैं। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को मान्यता दी गई हैं । हिन्दी भारत की प्रमुख भाषाओं में से एक है और देश के बड़े भू-भाग में प्रयोग होने के कारण यह जन संपर्क का एक सशक्त माध्यम है । अंग्रेजों के विरुद्ध स्वातंत्र्य संग्राम में हिन्दी ने समूचे भारत को एक सूत्र में पिरोने का कार्य बड़े सुंदर ढंग से किया था। 14 सितंबर 1949 के दिन हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता दी गई थी। वैश्विक स्तर पर हिन्दी तीसरी सबसे अधिक बोली-लिखी जाने वाली भाषा है। विश्व के 63 राष्ट्रों में हिन्दी भाषा का उपयोग हो रहा है। विश्व की सभी भाषाओं में यह सबसे वैज्ञानिक भाषा है। इसका व्याकरण, शब्द भंडार और ध्वन्यात्मक आधार बहुत शक्तिशाली है। हिन्दी में मानवीय सम्बन्धों और संवेदनाओं के लिए अलग अलग शब्द हैं और प्राय: एक शब्द का एक ही अर्थ होता है। हिन्दी में उपलब्ध साहित्य भी अपार है। अनेक विदेशी विश्वविद्यालयों में यह औपचारिक रूप से पढ़ाई जा रही है और प्रचुर मात्रा में विदेशी छात्र-छात्राएँ इसे स्वेच्छा से पढ़ भी रहे हैं। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दिलाने की मुहिम भी अनेक दशकों से चल रही है । इन प्रयासों से परे संयुक्त राष्ट्र की महासभा में हिन्दी की तूती गूंज चुकी है – 4 अक्तूबर,1977 को भारत के तत्कालीन विदेश मंत्री, श्री अटल बिहारी वाजपेई जी ने पहली बार संयुक्त राष्ट्र की महासभा में हिन्दी में अपना भाषण दिया था। इसके उपरांत नरेंद्र मोदी सरकार में विदेश मंत्री रह चुकीं, श्रीमती सुषमा स्वराज जी ने संयुक्त राष्ट्र ही नहीं सभी छोटे बड़े अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत की आवाज़ हिन्दी में बुलंद की है। हमारे वर्तमान प्रधान मंत्री, श्री नरेंद्र मोदीजी भी अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर अपना भाषण हिन्दी में ही देते हैं जो बहुत प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया जाता है। आज तकनीक की सहायता से श्रोता विश्व की किसी भी भाषा में दिया गया भाषण अपनी मातृभाषा में सुन सकते हैं। इसने हिन्दी को भी विश्व पटल पर स्वीकृत करवाया है।

अंग्रेज़ी और अन्य विदेशी भाषाओं की तुलना में हिन्दी को कम्प्यूटर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है, विशेषकर talking computers के लिए। इसका प्रमुख कारण है हिन्दी के पास ध्वनियों और शब्दों का विपुल भंडार का होना। हिन्दी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है कि शब्दों की ध्वनि के आधार पर शब्दों के उच्चारण के और उनको लिखने के अलग अलग नियम नहीं हैं - जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाता है। हिन्दी वर्णमाला में अक्षरों का क्रम भी उनकी ध्वनि और उच्चारण के अनुसार एक वैज्ञानिक तर्क पर आधारित है। यह विशेषता इस भाषा को एक वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करती है और यह विशेषताएं विश्व की किसी और भाषा में नहीं पाई जाती है। इस कारण हिन्दी सीखना बहुत सरल है। चार दिन के लिए भारत आया विदेशी पर्यटक भी हिन्दी के सामान्य शब्द बोलना आसानी से सीख कर स्थानीय लोगों से संवाद कर पाता है। फ्रेंच, जर्मन, चीनी भाषा – मैंडारिन, जापानी आदि कोई भी भाषा सीखना इतना सहज और सरल नहीं है जितना हिन्दी। यहाँ तक कि अँग्रेजी सीखना और बोलना भी काफी जटिल हो सकता है। अँग्रेजी में शब्दों के उच्चारण का और उनको लिखने का अलग अलग सलीका है और इन अलग अलग सलीकों का कोई ठोस व्याकरणीय आधार नहीं है। इसका प्रमुख कारण है अँग्रेजी के पास अपना मूल शब्द भंडार न होना – अँग्रेजी के अधिकतर प्रचलित शब्द फ्रेंच, लैटिन, स्पैनिश आदि यूरोपीय भाषाओं से लिए गए हैं। लिखने और बोलने के अलग अलग नियमों और सलीकों के कारण यूरोपीय भाषाएँ सीखना भी एक कठिन कार्य है।

भारत की बढ़ती आबादी, आप्रवासी भारतीयों के बढ़ते योगदान और भारत के बढ़ते राजनैतिक और आर्थिक प्रभाव के कारण हिंदी का वैश्विक संचार और व्यावसायिक संवाद में स्थान बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। पिछले कुछ दशकों में अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और वैश्वीकरण के फलस्वरूप पूरे संसार का बाज़ार हमें उपलब्ध हुआ है और वैश्विक बाज़ार को भी भारतीय ग्राहकों तक पहुँचने का मार्ग सुलभ हुआ है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार को भारत में पैर जमाने में जिसने सबसे अधिक सहायता करी है वो है हिन्दी भाषा। विदेशों में बसे भारतीयों तक पहुँचने का सबसे सरल मार्ग है हिन्दी और भारतीय संस्कृति। कम्प्यूटर , इंटरनेट और मोबाइल को भी आज हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं का चोला धारण करना पड़ा है। आज कम्प्यूटर, इंटरनेट और यहाँ तक कि मोबाइल पर भी हिन्दी और भारतीय भाषाओं में जानकारी ढूंढने और संदेश भेजने की सुविधा उपलब्ध है जो विदेशों में बसे भारतीयों को अपने देश से जुडने का स्वर्णिम अवसर प्रदान करती है।

इन सब बातों के अलावा, एक भाषा के रूप में हिन्दी ने अंग्रेज़ी और अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द अपने में आत्मसात करके स्वयं को और अधिक समृद्ध किया है और समय के प्रवाह के अनुरूप अपने आप को ढाल कर अपनी सार्थकता बनाए रखी है। विश्व की अनेक भाषाएँ यह ना कर पाने के कारण काल के गर्त में लुप्त हो गई हैं। आज विश्व पटल पर हिन्दी एक प्रमुख और सशक्त भाषा है और इसका स्वर दिनोदिन प्रखर होता जा रहा है। वैश्विक मंच पर हिन्दी अन्य विदेशी भाषाओं के मध्य स्वाभिमान के साथ खड़ी है और अपनी भूमिका बखूबी निभा रही है।

ooo

प्रशांत शर्मा
गौतमबुद्ध नगर-उत्तर प्रदेश
मो. 9837088796

आलेख

रात, कॉफी और गुलजार की किताबें .....

रात की खामोशी, एक कप ठंडी या गर्म कॉफी और हाथों में गुलजार साहब की किताब.... मेरे लिए इससे बेहतर साथी कोई नहीं। एक मनोविज्ञान प्रेमी, लेखक और जीवन कोच के रूप में मेरे जीवन का सबसे अद्भुत किस्सा किताबों जुड़ा है और जब बात गुलज़ार साहब की हो तो यह जुड़ाव एक खूबसूरत एहसास बन जाता है। रात का समय एक जादू बुनता है। जब पूरी दुनिया नींद के आगोश में होती है, तब मेरे विचार जागते हैं।

इन शाँत पलों में, जब सिर्फ मैं और मेरी कॉफी होते हैं, तब गुलज़ार साहब की रचनाएं मेरी साथी बन जाती हैं। उनकी कविताएँ और कहानियाँ मुझे जीवन के हर पहलू को गहराई से देखने की प्रेरणा देती हैं। मैं एक जीवन कोच, लेखक और विज्ञान का विद्यार्थी हूँ। मेरा मानना है कि हर इंसान के भीतर एक गहरी दुनिया होती है, जिसे शब्दों और भावनाओं के माध्यम से समझा जा सकता है और इस कला में गुलज़ार साहब मेरे सबसे बड़े गुरू हैं। उनकी लेखनी मुझे बताती है कि कैसे शब्द हमारी सोच और भावनाओं का आइना बन सकते हैं। जब दिसंबर की ठंडी रातें आती हैं और घड़ी आधी रात का समय दिखाती है, तब गुलज़ार साहब की किताबें मेरे लिए खास हो जाती हैं। ठंडी कॉफी या कभी-कभी गर्म कॉफी के साथ, उनकी रचनाएँ मुझे उन पलों में ले जाती हैं, जहाँ मैं खुद को सबसे ज्यादा महसूस करता हूँ। उनकी कविताएँ और कहानियाँ मेरे लिए एक यात्रा हैं – मन से आत्मा तक। यह यात्रा मुझे सिखाती है कि हर भावना की अपनी जगह और महत्व है। उनके शब्द मुझे याद दिलाते हैं कि जब हम अपने अंदर झाँकते हैं तो हमें जीवन के सबसे गहरे सबक मिलते हैं। गुलजार साहब की 1977 की फिल्म 'किताब' मेरे मन मेरी यादों में एक अमिट छाप छोड़ गई है। इस फिल्म में किशोर मन की उलझनों और समाज के बदलाव को जिस सरलता और गहराई से दिखाया गया है वह अद्वितीय है। केश्टो मुखर्जी और असित सेन जैसे कलाकारों ने इस फिल्म को जीवंत बना दिया। यह फिल्म मेरे लिए केवल एक फिल्म नहीं, अपितु जीवन का एक गहरा सबक है। इस फिल्म में एक बच्चे की मासूमियत और समाज की जटिलता को जिस खूबसूरती से दिखाया गया है वह हर उम्र के दर्शक के दिल को छूता है। लेकिन इस फिल्म की कहानी सबसे गहरा प्रभाव छोड़ती है, जिसे गुलज़ार साहब ने लिखा है। यह कहानी हमें सिखाती है कि हर छोटा या बड़ा अनुभव हमारे जीवन को समृद्ध बनाता है। जब मैं इस फिल्म के बारे में सोचता हूँ तो यह महसूस करता हूँ कि हमारे जीवन में भी हर रिश्ता, हर घटना और हर संघर्ष हमें एक नया दृष्टिकोण देता है। यह फिल्म हमें यह सिखाती है कि हमें जीवन को समझने के लिए अपनी मासूमियत और संवेदनशीलता को बचाए रखना चाहिए। हाल ही में मैंने गुलजार साहब की किताब 'जीया जले-द स्टोरी ऑफ साँग्स' पढ़ी। यह किताब सिर्फ गीतों का संग्रह नहीं है, बल्कि गीतों के पीछे की सोच, भावना और कला का खजाना है। इसमें बताया गया है कि कैसे हर गीत सिर्फ शब्दों का मेल नहीं, अपितु जीवन के अनुभवों का प्रतीक है। एक गीत, जैसे 'जीया जले..' केवल प्रेम का इज़हार नहीं है बल्कि उस प्रेम के संघर्ष और सुंदरता का उत्सव है। यह किताब युवाओं के लिए खासतौर पर महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह सिखाती है कि हर कला, हर अभिव्यक्ति और हर शब्द के पीछे एक गहरी कहानी होती है। युवाओं को यह समझने की जरूरत है कि कला और रचनात्मकता हमें हमारी भावनाओं से जोड़ती हैं। गुलज़ार साहब की यह किताब हमें यह दिखाती है कि कैसे एक कलाकार अपनी सोच ओ शब्दों में पिरोकर अमर बना सकता है। मेरे लिए, रातें पढ़ने का सबसे खास समय हैं। दिसंबर 2024 की ठंडी रातों में, जब दुनिया सो रही होती है, मैं गुलज़ार साहब की कहानियों में खो जाता हूँ। कॉफी का एक प्याला और उनकी कहानियों की गहराई – यह मेरे लिए मन और आत्मा को जोड़ने का समय है।

गुलज़ार साहब का लेखन जीवन को समझने का एक नया दृष्टिकोण देता है। उनकी कहानियाँ मन के तारों को छूती हैं और जीवन के गहरे पहलुओं को उजागर करती हैं। उनकी रचनाएँ मेरे लिए केवल किताबें नहीं हैं, वह एक ऐसी यात्रा हैं जो मन और आत्मा को जोड़ती हैं। उनकी कहानियाँ मेरे जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं।

ooo

मधु वार्ष्णेय
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश
9410615755

आलेख

फड़; गायन व चित्रकला

(उदयपुर डायरी ..... गतांक से आगे)

बारिश थम चुकी थी हम उसारे में ढिबरी की रोशनी में एक बड़ी सी बिछावन पर बैठे हुए थे। पुरुष सिर पर पगड़ी बांधे हुए थे और महिलाएं चटकीले रंगों वाले पारंपरिक लहंगा चुनरी वाली पोशाक पहने हुए थी। खुले आकाश के नीचे रात के पहले पहर से अंतिम तक भोपा भोपी की स्वरांजलि से झड़कर फूटने वाले तारों से लोकमानस के दर्शन हो रहे थे, पट के पट खुलते चले जा रहे थे। चित्रों द्वारा कहानियों और शौर्य गाथाओं की पुष्टि के लिए स्वरांजलि की अद्भुत प्रस्तुति थी, लग रहा था जैसे किसी दूसरे देश में भटककर आ गए हों, यह मेरे जीवन का विचित्र और अविस्मरणीय अनुभव था।

प्रकृति व जीवन एक दूसरे के साथ मिलकर इस संसार को गतिमान रखते हैं और मानव इनके बीच संदेशवाहक का काम करता है। किसी दूर दराज के गांव में अपरिचित व्यक्तियों के बीच वहां के स्थानीय लोगों के द्वारा किसी विशेष गायन और नृत्य के आयोजन में सम्मिलित होना खुद में कितना रोमांचित करने वाला अद्भुत पल था। कैनवास पर उकेरी हुई तस्वीरों के माध्यम से घटनाओं की जानकारी देना मानो हमारे जीवन में प्रकृति और जीवन को गुंजायमान चलायमान और मूर्तिमान करना था। फड़ चित्रकला कही जाने वाली यह कला गुंजायमान और चलायमान दोनों रूपों में दिखाई देती थी। चित्रांकन के माध्यम से परंपराओं को जीवंत करता हुआ यह एक चलता फिरता मंदिर था। जो लंबे चौड़े आड़े कैनवास पर चित्रित किया गया था। इन चित्रों को देखकर व कथा सुनकर तत्कालिक सामाजिक जीवन व सांस्कृतिक मान्यताओं का अध्ययन किया जा सकता था।

उनके अनुसार.....

मोटे कपड़े पर लोक देवताओं के कार्यों की जो शक्तियां हैं वह चित्रों के रूप में अंकित होती हैं, वह वहां प्रचलित, उनके नायक 'देवनारायण' अथवा 'पाबूजी' के भूतों के नृत्य और गान के समय उनके पीछे एक मंदिर में रहती हैं। लोक देवताओं के व्याख्यान अर्थात 'पोवाडे लोक गाथाएं' रावण हत्था और जंतर जैसे वाद्य यंत्रों के साथ जनता मुग्ध होकर सुनती है। उनके असाधारण गायन नृत्य को 'फड़' चित्रकला के माध्यम से सुन और समझ कर हम तत्कालिक सामाजिक जीवन और उनकी सांस्कृतिक मान्यताओं का अध्ययन कर रहे थे।

आइए, पहले फड़ चित्रकला जो सर्वप्रथम भीलवाड़ा के शाहपुरा की रंगाई और छपाई करने वाले समुदाय द्वारा बनाई गई थीं। उसके बारे में कुछ जानकारी प्राप्त कर लेते हैं.....

'फड़' चित्रकला मुख्यत: कपड़े पर बनी बड़े आकार की समतल चित्रकला होती है, जिनमें स्थानीय

नायक देवताओं की वीरगाथाओं का चित्रण किया जाता है, इसमें जन जन में पूरी तरह से फैली हुई लोक गाथाओं का व्यापक चित्रण होता है जिसमें आकृतियों एवं चित्रों के माध्यम से घटनाओं को एक विशिष्ट शैली में चित्रों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। यह वीर गाथाओं के लिए एक नाट्य दृश्य के रूप में होती हैं क्योंकि इनमें अलग-अलग घटनाओं का चित्रण होता है और चित्रकला को सामान्यत: सूर्यास्त के पश्चात खोला जाता है और पूरी रात इनका प्रदर्शन होता है। हस्त निर्मित 15 से 20 हाथ नाप के लट्ठे पर लोक देवता 'पाबूजी' और 'देवनारायण' की शौर्य गाथाओं को और उनके मूल तत्वों को हस्तनिर्मित चटकीले रंगों से चित्रों द्वारा कपड़े पर अंकित किया गया था, लंबे चौड़े फलक पर लोक देवताओं की यह चित्रित गाथा ही 'फड़' थी।

शमीम ने बताया इसे विशेष समुदाय के भोपा निश्चित अवसरों पर चित्रों के माध्यम से गांव गांव जाकर सुनाते हैं, भोपा की पत्नी भोपी के हाथ में गान के समय दीपक रहता है वह सहयोगी की भूमिका निभाती है। भोपा इन चित्र दृश्यों को छड़ी की सहायता से समझाता है साथ ही वातावरण को संगीतमय बनाने के लिए एक लोक वाद्य बजाता है जिसे रावण हत्था और जंतर कहते हैं। पाबूजी के 'पोवाडे कथा, 'देवनारायण की वार्ता' का लाइव टेलीकास्ट होता है। यह 'फड़' पूरी रात नृत्य के साथ पेड़ के नीचे गाई जाती हैं । वह स्थल जहां यह आयोजन होता है उसे त्रिवेणी स्थल जैसा पवित्र माना जाता है।

राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र में शाहपुरा गांव से इस कला की शुरुआत मानी जाती है, लेकिन इसके कलाकार अन्य जगहों पर जाकर बस गए फलस्वरूप यह कला लगातार फैलती गई और अपनी विशिष्ट शैली के कारण बहुत ज्यादा लोकप्रिय भी हुई।

कहा जाता है कि जब कोई विदेशी आक्रांता आक्रमण करता था तो उससे युद्ध में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए सैनिकों का मनोरंजन करने, शौर्य गाथा गाकर उनमें जोश पैदा करने उन्हें उत्साहित करने के लिए, दुश्मन कहीं रात्रि में ही आक्रमण न कर दे यही सोचकर रात्रि में 'फड़' गाई जाती थी। इसमें गांव के लोग दूर-दूर से आकर रात भर अपने अंदर एक अलौकिक शक्ति को जागृत करते थे।

ऐसा अद्भुत समां बंधा कि हम मंत्रमुग्ध थे। लोग सुध-बुध खोकर तन्मय होकर फड़ के गायन के आनंद में डुबकियां लगा रहे थे। देर रात्रि तक फड़ चित्रकला गायकी का तब तक प्रदर्शन होता रहा जब तक कि बारिश शुरू न हो गई। ऐसा शानदार प्रदर्शन और वहां के स्थानीय लोगों का प्रेम सिक्त स्नेह पाकर हम धन्य थे। यह मेरे जीवन का एक ऐसा अध्याय था जिसमें कभी न भूलने वाले विचित्र अनुभव शामिल थे। कभी न भूलने वाले अनुभवों को आत्मसात करते हुए कुछ घंटो की नींद ली और भोर में सूर्योदय से पहले संतुष्टि का भाव लिए स्नेह पल्लवित नम आंखों से हमने गांव वालों से जाने की अनुमति ली और अगले गंतव्य कुंभलगढ़ दुर्ग की ओर प्रस्थान किया।

०००

सोनम यादव
गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो. 8130556098

संस्मरण

रामचरित मानस एवं पिताश्री

मेरे जीवन में पंडिताई और मानस पर रामचरितमानस का आधिपत्य अत्यंत गहरा है और जीवन रामजी की कृपा के अधीन है। वैसे तो सबका ही जीवन राम कृपा के ही अधीन होता है लेकिन जब से होश संभाला है पहला असर मन-मस्तिष्क पर गोस्वामीजी की चौपाइयों का ही रहा। इसका कारण यही रहा कि पिताजी का जीवन ही रामचरित मानस में संलग्न था। सुबह उठकर नहा धो कर पूजा और रामायण का पाठ करना उनकी नियमित दिनचर्या में शामिल था और मैं सदा पापा के साथ ही रही हूँ। मेरा खाना-पीना, सोना, नहाना, आना-जाना सब पापा के साथ ही होता था तो मेरे व्यक्तित्व पर उनकी छाप अधिक रही। यहाँ तक कि सर्दियों में जब वे स्नान कर कम्बल ओढ कर रामायण पढते मैं उनकी गोद में ही बैठी होती। पापा के जीवन में हास-परिहास, लडाई-झगड़ा सब मानस की चौपाइयों के साथ होता था जो मुझे लगभग कंठस्थ थीं। रामायण में उनकी श्रद्धा इस कदर थी कि चाहे खाना न खायें, रामायण जरूर पढते थे। जब वे अपने जीवन के सबसे कठिन दौर से गुजर रहे थे किसी ने बताया अधिक रामचरितमानस का पाठ नहीं करना चाहिए, घर में कठिनाइयाँ बढती हैं। हम भी डर गये, पापा से कहा कि आप कभी-कभी ही पढ़ा करो लेकिन उनका नियम न टूटा, न ही श्रद्धा कम हुई, न दुखों से भयभीत होकर उनका रामजी से स्नेह कम हुआ।

उनके साथ अंत्याक्षरी में कोई अधिक देर ठहर नहीं सकता था। ण या ढ ड पर समाप्त होने वाली चौपाई पढते और प्रतिद्वंद्वी ढेर। उनके मित्रों में पंडित अधिक थे। अधार्मिक लोगों से उनकी नहीं पटती थी। पंडित शिवराम शास्त्री और मास्टर वंशीधर पांडेय उनके अच्छे मित्र थे जिनसे उनकी पांडित्यपूर्ण नोकझोंक होती थी। उनके वाद विवाद में भी चौपाइयों का वाचन होता, उनके यही अस्त्र शस्त्र थे।

एक बडे बुजुर्ग पंडित गोवर्धन लाल जी थे जो रामलीला मंच पर रामचरितमानस का पाठ करते थे। चौपाई, दोहा, सोरठा के माध्यम से सुख-दुख, विस्मय, क्रोध, वीर, करुण आदि रसों का अपनी उच्चारण कला से अनुभव करा देते थे। मेरे बचपन में वो गोलोकवासी हो गये थे। उनकी धूमिल सी कुछ स्मृतियाँ हैं जो यदा कदा दस्तक देती रहती हैं। वे सत्यनारायण की कथा बहुत अच्छी सुनाते थे। उनकी कथा में लोग बिना बुलाये पहुँचते, बैठने की जगह नहीं मिलती, प्रसाद कम पड़ जाता। विशेष होते थे उनके दोहे और चुटकुले जिन्हें वो बडे अनुनय-विनय करने के बाद सुनाते थे।

पापा के एक पंडित मित्र की तो अद्भुत घटना है कि जब पापा का इस असार संसार को छोड़कर जाना हुआ तो उन्होंने शिवाष्टक का पाठ करते हुए अंतिम सांस मेरी गोद में ही ली। दिन में ही सारा परिवार उनके पास इकट्ठा था सबसे हाथ जोड़कर उन्होंने क्षमा याचना की। बच्चों और बहुओं से अंत समय तक बोलते रहे उनकी प्रज्ञा क्षीण नही हुई और सभी परिजन प्रियजन उनके पास थे। हाँ, तो मैं बात कर रही थी उनके पंडित मित्र की जिन्होंने उनके संस्कार कराये थे हवन करवाते हुए स्वयं भी रो पड़े। कुछ महीने के बाद उनका भी गोलोक गमन हो गया जबकि उनका स्वास्थ्य बिल्कुल अच्छा था।

आज मुझे ये सब इसलिए भी याद आ गया कि जनवरी में पापा को गये नौ बर्ष हो रहे हैं उनकी असंख्य स्मृतियाँ मन को व्यथित करती रहती हैं। याद इसलिए आई कि बेटे ने एक सोरठा सुना जिसकी अंतिम पंक्ति उसे याद रही वो प्रारंभ की पंक्ति जानना चाहता था जो मैं उसे कोशिश करने के बाद भी बता नहीं पाई और पापा का स्मरण हो आया जो पूछते ही तुरंत बता देते थे। राम जी उन्हें अपने चरणों में स्थान दें। ***

डॉ अंजु दुआ जैमिनी
फरीदाबाद (हरियाणा)
मो.: 9810236253

कविताएं

कश्मीर

इत्र में नहाया कश्मीर
सर्दियों का गुलमर्ग
बतियाने लगा मुझसे
बर्फ भीतर पिघली
हो गई मैं डल झील
झाँक रहे मुझमें चार चिनार
इत्र में नहाए गुले-गुलज़ार शालीमार,
निशात, चश्मेशाही,
कस्तूरी मैं तुम कहवा
शिकारे में सैर करते हम
जन्नत-ए-कश्मीर बसा हममें।

चूमती रही कुदरत

भर लूँ हरीतिमा नयनों में
बाँध लूँ बारिश की बूंदें बाँहों में
बहा दूँ सारी होशियारी
कर लूँ यारी हसीन वादियों से
चूमती रही कुदरत मुझे मैं उसे
बंगलुरू से मैसूर तक बेतहाशा
बैंगनी बोगनविलिया, गुलमोहर लाल
माथे पर चुंबन प्रेम-पगा रिमझिमी फव्वारा
वृंदावन में थिरके
रोम-रोम बजाए मेरा बांसुरिया-धुन।

मुझमें बसा जंगल

स्याह रतिया में जंगल जवां
गुनगुना-बतिया रहे थे कीट-पतंगे
कर रहे सवाल क्रोटोस, चाइना रोज़
दे रहे जवाब चाय-कॉफी के बागान
महका रहे थे कूर्ग की फ़िज़ा को
फूल-पत्ते और लदी-फदी टहनियाँ
आँखों के सामने छा गया स्कॉटलैंड
बस गया मुझमें एक घना जंगल
उस जंगल में बैठी हुई मैं
ले रही कड़क चाय की चटख़ चुस्कियाँ।

दोरंगे गुलाब

ऊटी रोज़ गार्डन के निवासी
लाल, पीले, सफेद, नारंगी, गुलाबी
दोरंगे गुलाब भी उमगते हुए
बच्चों की तरह किलकते हुए
झूमते-गाते हाथ बढ़ाते
छुअन से मेरी फिर घबराते
उंगली पकड़ी थोड़ा शर्माते
साथ चलने को लगे मचलने
भर लिया मैंने आँखों में अपनी
दिल में उतारा लाल डोरों के रस्ते।

०००

डॉ. देवकीनन्दन शर्मा
गुलावठी-बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश
मो. 9837573250

गीत गुनगुनाने दो

प्रतिक्षण मर रही संवेदनाएं
अहर्निश बढ़ रही यातनाएं
मानस-भूमि पर
विश्वास के अंकुर उगाने दो
मुझे गीत गुनगुनाने दो

नफरतों की उग रही नागफनियां
हसरतों की लुट रही हसीन वादियाँ
मन मुंडेर पर
प्रीत की दीपमाला सजाने दो
मुझे गीत गुनगुनाने दो
आतंक की घिर रही निविड़ निशाएँ
रक्तरंजित हो रही दसों दिशाएँ
हृदय पटल पर
शांति की इबारत जमाने दो
मुझे गीत गुनगुनाने दो

नूतन विहान की फूट रहीं रश्मियाँ
कोटि-कोटि कंठ गूंज रहीं शहनाइयाँ
समय-रथ पर
उल्लास की पताका फहराने दो
मुझे गीत गुनगुनाने दो

०००

अमनदीप
बुलन्दशहर उत्तर प्रदेश
मो.: 7055557381

किस्मत

किस्मत का ही यह खेल है सारा
कोई राजा कोई दुखों का है मारा
सोचा बहुत बात समझ नहीं आई
वाह किस्मत क्या क्या तस्वीर दिखाई ...

देखा किस्मत को खेल खेलते
सजते संवरते सिसकते सपने
किस्मत रूठी बार बार मनाई
वाह किस्मत क्या क्या तस्वीर दिखाई...

कहते किस्मत है हाथ की लकीरों में
कर्मवीरों ने पलट दी बाजी पलों में
संघर्षों की कहानी खूब रंग लाई
वाह किस्मत क्या क्या तस्वीर दिखाई....

मित्रो कभी न रूठे किस्मत तुम से
संकल्प लो तुम इसी पल खुद से
लोग कहें कर्म से किस्मत बनाई
वाह किस्मत क्या क्या तस्वीर दिखाई.....

ooo

नेहा वैद
नोएडा-उत्तर प्रदेश
मो. 97699 92656

सारे रिश्ते खो जाते

तथाकथित अनपढ़ परिवारों
से हैं बचे हुए,
पढ़े-लिखों के हाथों सारे
रिश्ते खो जाते।।

घर में इकलौता बालक
जैसे हो दीवाना
जिसने नहीं बहन को
ना ही भाई को जाना
झगड़े किसके साथ प्यार से
मिल बैठे-खाए
रिश्तों के मीठेपन से जो
रहता अनजाना
चीज़ों के अम्बार लगाकर
हम उसके आगे
रिश्तों का मीठापन उसको
समझा ना पाते
तथाकथित अनपढ़ परिवारों
से हैं बचे हुए
पढ़े-लिखों के हाथों सारे
रिश्ते खो जाते।

रिश्ते जो संबोधन से
उद्घोषित होते हैं
सहज रूप से मन में उठते
पोषित होते हैं
वही आज इस भौतिकता की
आपा-धापी में
पढ़े-लिखों से रूठे
मानो शोषित होते हैं
'सीमित हो परिवार' बात जो
करके बड़ी-बडी
सुख-सुविधा के समीकरण ही
दिन-भर बिठलाते
तथाकथित अनपढ परिवारों
से हैं बचे हुए
पढ़े-लिखों के हाथों सारे
रिश्ते खो जाते।।

० ० ०

डॉ. भावना तिवारी
नोएडा-उत्तर प्रदेश
मो. 9935318378

इन जुलूसों, रैलियों में

इन वृहद आयोजनों में हम कहाँ हैं ?

ईंट,गारा, बोझ, मलबा ढो रहे हैं
बेचते हैं फूल , खुशबू खो रहे हैं
हृदय बंज़र भूमि, आँसू बो रहे हैं
बँट रहे संसाधनों में हम कहाँ हैं ?
इन वृहद आयोजनों में हम कहाँ हैं ?

इन जुलूसों -रैलियों में क़ैद रोटी
भव्यता ने खाल खींची नोच बोटी
छल गया प्रारब्ध, क़िस्मत रेख-खोटी
दिख रहे विज्ञापनों में हम कहाँ हैं ?
इन वृहद आयोजनों में हम कहाँ हैं ?

जब उठाया सिर हमारी रीढ़ टूटी
ऊपरी मंज़िल दिखी तो नींव छूटी
ओखली में श्रम गया फिर आह कूटी
सिर चढ़े आन्दोलनों में हम कहाँ हैं ?
इन वृहद आयोजनों में हम कहाँ हैं ?

ooo

बाधित प्राण-वायु

ये कैसा विकास है हमसे
नदियाँ, पर्वत सब नाख़ुश हैं।

चारों ओर प्रदूषण फ़ैला
पानी, पवन सभी कुछ मैला
जीवन का आस्वाद कसैला
सरकारी दस्तावेज़ों के
बड़े-बड़े आन्दोलन फ़ुस हैं।
ये कैसा विकास है हमसे
नदियाँ, पर्वत सब नाख़ुश हैं।

खुली उपेक्षा अधिनियमों की
व्यर्थ उपस्थिति क़ानूनों की
दुर्गति जंगल-वन-उपवन की
इच्छाओं के वशीभूत,
विष घोल रहे, शापित मति- ठस हैं।
ये कैसा विकास है हमसे
नदियाँ, पर्वत सब नाख़ुश हैं।

पीर न समझे लोग लहर की
जकड़ी हैं धमनियाँ शहर की
आशंकाएँ रोज़ क़हर की
रक्त-संचरण, यान्त्रिक- साँसें
बाधित प्राण-वायु फुफ्फुस हैं।
ये कैसा विकास है हमसे
नदियाँ, पर्वत सब नाख़ुश हैं।

ooo

गोविन्द गुलशन
गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो. 9810261241

ग़ज़ल

1

मुहब्बतों की फ़क़त नुमाइश
जो हो रही है वही ग़लत है
मुख़ालिफ़त में कोई भी साज़िश
जो हो रही है वही ग़लत है

हमें यक़ीं है भरम पे अपने,
है ज़र्फ़ पर इत्मीनान हमको
हमारी क़ुव्वत की आज़माइश
जो हो रही है वही ग़लत है

निगाह कोई बदल भी जाए
निगाह पढ़ना नहीं है मुश्किल
कि पर्दादारी में कोई जुम्बिश
जो हो रही है वही ग़लत है

किया था हमने इशारा तुमको
बहुत बुरी शै है ये मुहब्बत
तुम्हारी आँखों से आज बारिश
जो हो रही है वही ग़लत है.

कहाँ चढ़ाने थे फूल तुमको
कहाँ चढ़ा कर तुम आ गए हो
नवाज़िशों की फ़ुज़ूल काविश
जो हो रही है वही ग़लत है

ख़िज़ाँ की रुत है और आज 'गुलशन'
निगाह लिपटी हुई है गुल से
अब ऐसी सूरत में कोई ख़्वाहिश
जो हो रही है वही ग़लत है

2

दिलों में पोशीदा बेक़रारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी
कि उसकी आँखों में राज़दारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी

हमीं उठाएँगे बोझ सर पर,
हमीं उतारेंगे बोझ सर से
तुम्हारी कोई भी ज़िम्मेदारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी

रवायतों से तुम्हारी रग़बत,
तुम्हारा रिश्ता कभी नहीं था
तुम्हारे लहजे में इंकिसारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी.

किसी की साँसें उधार लेकर
न हम जिए हैं न जी रहे हैं
हमारी कोई भी देनदारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी.

बचाके रक्खा है नस्ल-ए-नौ को
नई हवा की लपट से हमने
हमारे बच्चों में होशियारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी.

तुम्हारी आँखों में सिर्फ़ तुम हो
न कोई सूरज न चाँद कोई
तुम्हारी सोचों में दुनियादारी
अभी नहीं है कभी नहीं थी

०००

मासूम गाजियाबादी
गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो. 9818370016

ग़ज़ल

1

जो कलियों ही से नादानी करेंगे।
चमन की क्या निगहबानी करेंगे।।

बहाली पर तुम्हरी क्या पता था।
परिंदे तक भी हैरानी करेंगे।।

खंडर होती इमारत ही सही हम।
हमारा ज़िक्र सैलानी करेंगे।।

सफ़ीना उसके दम पर ले चले हो।
तो ख़ुद तूफ़ान निगरानी करेंगे।।

वो जो महशर में बा-ईमान होंगे।
फ़रिश्ते उनकी अगवानी करेंगे।।

मैं मज़लूमों के दामन सी रहा हूँ।
वो मुझ पे ख़ाक सुल्तानी करेंगे।।
क
िसी की राह का पत्थर हटा कर।
चलो ख़ुद पर महरबानी करेंगे।।

हंसेंगे जिस घडी मासूम बच्चे।
फ़ज़ा को और मस्तानी करेंगे।

ooo

2

रंग हम वो फ़ज़ाओं में भर जाएँगे।
ख़्वाब दौरे-ख़िज़ां के बिखर जाएँगे।।

पत्ते-पत्ते को यूँ बाग़ी कर जाएँगे।
बिजलियों के भी चेहरे उतर जाएँगे।।

चिड़ियाँ दें हुक़्म बाज़ों को परवाज़ का।
उस निज़ामत की हम नीव धर जाएँगे।।

आम कर तो दूं तारीख़े-गुलशन मगर।
बाग़बां मुंह छुपाने किधर जाएँगे।।

बे-सहारों के हक़ में उठें तो सही।
पाँव चूमेंगी मंज़िल जिधर जाएँगे।।

जब दरख़्तों पे फल हों हिफ़ाज़त करें।
वक्त के तोते वरना कुतर जाएँगे।।

सुर्ख़ी अख़बार की बस छुपकर पढें।
जितने मासूम बच्चे हैं डर जाएंगे।।

ooo

सञ्जय शुक्ल
राजेंद्र नगर, गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो.: 8076933040

वबाल करता है

उनसे तीखे सवाल करता है
जान को क्यों वबाल करता है।

माँगता है जवाब हाकिम से
किसलिए ये मजाल करता है।

है फ़रेबी मगर वफ़ा की वो
पेश दिलकश मिसाल करता है।

शाह की बात पर भरोसा है
यार तू भी कमाल करता है।

रहनुमा भी वही लगे करने
काम जो इक दलाल करता है।

'सेक्युलर' लफ़्ज़ बन गया खंजर
रोज़ कितने हलाल करता है।

ज़िन्दगी भर फ़रेब मिलने हैं
क्यों अभी से मलाल करता है।

उस तरफ़ कुछ नज़र नहीं आता
ये तू किससे विसाल करता है।

'फोन' पर हाल पूछ कर माँ का
लाल कितना निहाल करता है।

० ० ०

और है कुछ

असलियत में तो कहानी और है कुछ
जो सुनी उनकी जुबानी और है कुछ।

जस की तस मत बात उनकी मान लेना
कह रहे कुछ और मानी और है कुछ।

हल न मसले हो सकें,ऐसा नहीं है
चाहती पर राजधानी और है कुछ।

फल रहे हैं नख़्ल अब पुरख़ार ही बस
है नहीं यह बाग़वानी और है कुछ।

जगमगाहट यह नई उम्दा बहुत है
रोशनी लेकिन पुरानी और है कुछ।

देखकर तुम झील-सी मत डूब जाना
आँख में उनकी न पानी और है कुछ।

आपने बाज़ार की हर चीज़ चाही
हम जुदा हैं हमने ठानी और है कुछ।

ज़िन्दगी थी पाक जब तक थी अयानी
हो गई जबसे सयानी और है कुछ।

शाहजादों में बहुत है ताव लेकिन
क़ौम पर मिटती जवानी और है कुछ।

० ० ०

कीर्ति 'रतन'
ग्रेटर नोएडा वेस्ट उत्तर प्रदेश
मो. 9899646286

ग़ज़ल

इक अक़ीदत हूँ इबादत हूँ मैं
ग़ौर से देखो मुहब्बत हूँ मैं

मेरी हर बात में शिद्दत है बहुत
फिर न कहना कि मुसीबत हूँ मैं

बर्क़ मुस्कान तो नज़रें जादू
सर से पांओं तक क़यामत हूँ मैं

नर्म लहजे से ही पेश आना तुम
एक हस्सास रवायत हूँ मैं

अदबो-आदाब से लो मेरा नाम
लखनवी शान ओ नफ़ासत हूँ मैं

मुझको नाराज़ न कर देना तुम
इक मुक़द्दस सी सदाक़त हूँ मैं

मुझको बांहों में सँभाले रखना
गुल हूँ, रेशम हूँ, नज़ाक़त हूँ मैं

करना मत नाम से तौबा मेरे
ज़िंदगी भर की ज़रूरत हूँ मैं

ooo

लवलेश दत्त
बरेली-उत्तर प्रदेश
9412345679

कहानी

वानप्रस्थ

क्या हुआ?

"...."

"लो, चाय पी लो"

"अब जो होना था हो गया, इतना सोचने से और खुद को परेशान करने से क्या फायदा?"

"...."

"जब अपना ही सिक्का खोटा निकल गया तो..." उनकी आवाज़ भर्राने लगी। उन्होंने स्वयं को संयत कर चाय की चुस्की ली।

"हमें नहीं पता था कि अपनी औलाद ही हमसे इतना बड़ा छल करेगी..." कहते-कहते सुधा रोने लगी।

"शान्त हो जाओ..." उन्होंने कहा लेकिन खुद उनका मन भी कहाँ शान्त था। कल शाम जब से उन्हें यह बात पता चली कि यह कालोनी वास्तव में वृद्धजनों के लिए बनी है, तो उनके पैरों से जमीन खिसक गयी। रामसरन जी को तो जैसे साँप सूँघ गया था। मस्तिष्क सुन्न हो गया था। कुछ सोचने-समझने की शक्ति क्षीण-सी हो गयी थी। जैसे तैसे वे लिफ्ट में चढ़कर अपने फ्लैट तक आये और काफी देर तक गुम-सुम बैठे रहे। उनकी पत्नी सुधा ने बहुत पूछा लेकिन उन्होंने कोई जबाव नहीं दिया।

रात में जब वे बेडरूम में गये तो सुधा के सब्र का बाँध टूट गया। टीवी देखती सुधा ने झट टीवी बन्द किया और रामसरन का हाथ अपने हाथ में लेकर बोली, "क्या बात है? शाम को जब से टहलकर आये हो, तुम्हारा चेहरा उतरा हुआ है। आखिर बात क्या है, बताते क्यों नहीं?"

स्नेह के स्पर्श से उनके सब्र का बाँध टूट गया। सुबकते हुए वे बोले, "अमित ने हमे धोखा दिया," भर्राई आवाज़ उनके गले में ही अटक गयी इसके आगे वे न बोल पाये। सुधा को कुछ समझ नहीं आया। उसने घबराते हुए पूछा, सीधे-सीधे बताओ क्या बात है? धोखा कैसा? मुझे घबराहट हो रही है, जल्दी बताओ हुआ क्या है?"

स्वयं को सँभालते हुए वे बोले, "यह कॉलोनी वृद्धों के लिए है...यानी इसमें केवल बूढ़े ही रह सकते हैं।"

"केवल बूढ़े रह सकते हैं मतलब? साफ-साफ बताओ ना," सुधा ने मनुहार की।

"मतलब नये तरह का वृद्धाश्रम है यह कॉलोनी...अमित ने नया फ्लैट लेने की बात झूठ कही थी, सच तो यह है कि उसने हमें वृद्धाश्रम में ला पटका है और खुद हमेशा के लिए कनाडा चला गया," कहकर वे रो पड़े। सुधा भी यह सुनकर एकदम सन्न हो गयी। उसका मन चीत्कार कर उठा। वह रो रही थी लेकिन उसकी आँखों से आँसू नहीं निकल रहे थे। उसने सिर्फ इतना ही कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं?" और शून्य में कहीं खो गयी।

मन हलका होने के बाद रामसरन ने अपनी आँखें पोंछीं और सुधा की ओर देखते हुए बोले, "आज जब मैं टहलने गया तो चौकीदार से मैंने पूछा कि हमें आये हुए तीन महीने हो गये इस कालोनी में लेकिन कोई दिखता नहीं है, इक्का-दुक्का लोग ही यहाँ-वहाँ दिखते हैं। क्या यहाँ लोग मकान नहीं ले रहे हैं? तब चौकीदार ने बताया कि 'यह कोई साधारण कालोनी नहीं है, यह वृद्धों के लिए खास बनायी गयी है। शहर के एक नामी बिल्डर की नयी योजना है। इसमें आपका मकान भी आपका परमानेन्ट नहीं है, जब तक आप और माता जी हैं, आप यहाँ रहेंगे इसके बाद आपका मकान किसी और

बुजुर्ग को दे दिया जाएगा। यही सिस्टम है।"

उन्होंने चौकीदार से फिर पूछा, "और जो हमने पैसा दिया है वह?" चौकीदार ने कहा, "बाबू जी, घर बैठे राशन, दूध, अखबार, दवाई आदि जो आपको मिल रहा है, वह उसमें खर्च होगा और कुछ आपके फ्लैट के मेंटिनेंस में...वरना क्या बीस लाख रूपये में इस शहर मकान मिलता है?"

"मतलब...मेरी कुछ समझ में नहीं आ रहा है," रामसरन ने चौकीदार के पास पड़ी कुर्सी पर बैठते हुए कहा।

"देखिए बाबू जी, जो बच्चे विदेशों में जाकर बस जाते हैं, उनके लिए इस कॉलोनी के बिल्डर ने एक योजना बनाई है कि वे अपने माता-पिता को यहाँ एक फ्लैट दिलवाएँ। उम्र के हिसाब से फ्लैट की कीमत होती है, यानी कि यदि माता-पिता की उम्र पैंसठ से सत्तर के बीच है तो बीस से पच्चीस लाख रूपये, पचहत्तर से अस्सी के बीच है तो पन्द्रह लाख रूपये और पिच्यासी से नब्बे के आसपास है तो केवल दस लाख रूपये। इसमें उनके माता-पिता का खाना-पीना, नौकरानी, दवाई, राशन वगैरह सब शामिल है।...यहाँ तक कि अंतिम संस्कार भी...जब मातापिता नहीं रहते हैं तो वह फ्लैट साफ-सफाई करवाकर किसी और के लिए दे दिया जाता है।" कहकर चौकीदार ने गहरी साँस ली और आगे बोला, "अजीब दुनिया है अमीरों की...इससे तो हम गरीब लोग ही अच्छे हैं, जो कम-से-कम अपने माता-पिता को अपनी देहरी नहीं लाँघने देते...आखिरी साँस तक सेवा करते हैं उनकी। उन्हें अकेला और बेसहारा नहीं छोड़ते।"

चौकीदार की बातें सुनकर रामसरन का दिल बैठने लगा। उन्हें घबराहट होने लगी। वे जैसे-तैसे अपने फ्लैट में वापस आ गए और एकदम शान्त होकर सोफे पर बैठकर अखबार पढ़ने का नाटक करने लगे। सुधा रात के खाने की तैयारी में व्यस्त थी। उसने एक-दो बार पूछा लेकिन रामसरन की ओर से कोई उत्तर न आने के बाद वह रसोई में चली गयी थी लेकिन अब जब उसे रामसरन की उदासी का कारण पता चला तो वह अपनी सुधबुध खो बैठी। मानो उसके कलेजे पर किसी ने आरी चला दी हो। बार-बार उसके मस्तिष्क में रामसरन के शब्द गूंज रहे थे, 'अमित हमेशा के लिए कनाडा चला गया।' वह कुछ सोचने समझने की स्थिति में न रही और चुपचाप मुँह फेरकर लेट गयी। जैसे उसने सबसे मुँह मोड़ लिया हो। रामसरन से भी आगे कुछ कहते न बना।

रामसरन और सुधा तीन महीने पहले ही इस कालोनी में आये थे। अब तक की पूरी जिन्दगी कस्बेनुमा शहर के उनके पुश्तैनी मकान में कट गयी थी। हाँ, बड़े शहर में बसने का एक सपना जरूर था लेकिन एकमात्र पुत्र अमित को बहुत बड़ा आदमी बनाने के सपने ने उन्हें छोटे शहर से बाहर ही नहीं निकलने दिया और बड़े शहर में रहने का उनका सपना धूमिल होता गया। वे जो कुछ करते सब अपने बेटे अमित की पढ़ाई-लिखाई में ही लगा देते। सरकारी जूनियर हाईस्कूल का मास्टर कर भी कितना सकता है। तीन वक्त की रोटी, साधारण कपड़े और साइकिल बस इसके बात जो बचता वह अमित की पढ़ाई में जाता। इंजीनियरिंग में सेलेक्ट होकर अमित ने भी उनके सपनों में रंग भरना शुरू कर दिया था। जब-जब अमित कॉलेज से आता तो माता-पिता का सीना गर्व से फूल जाता था। रिश्ते-नाते तो बहुत थे नहीं, हाँ, आस-पड़ोस वालों में रामसरन की प्रशंसा होती। अमित अन्य बच्चों को लिए एक आदर्श बन गया था। इंजीनियरिंग के बाद अमित ने कई जगह काम किया और अनुभव हासिल करके एक बहुत बड़ी कम्पनी में इंजीनियर बन गया। उसने खूब उन्नति की। इधर रामसरन जी भी रिटायर हो चुके थे। जो कुछ पैसा मिला उससे अमित की शादी कर दी। हालांकि अमित ने अपनी मर्जी से ही शादी की। करता भी क्यों न, इतना बड़ा इंजीनियर है और फिर वह अपने योग्य लड़की ही ढूँढ़ेगा। रामसरन जी को बाद में पता चला कि वह लड़की शहर के नामी बिल्डर की बेटी है और अमित के साथ ही उसने भी इंजीनियरिंग की है। रामसरन इस मामले में खुले विचारों के व्यक्ति हैं। बेटे की खुशी में ही उन्होंने सदैव अपनी खुशी मानी।

इस बार अमित जब नयी कार से घर आया, देखने वालों का मेला जुड़ गया था रामसरन के दरवाजे के आगे। यह तो अच्छा था कि रामसरन के घर के सामने काफी खुली जगह थी, इसलिए कार वहीं खड़ी हो गयी वरना तो घर से दूर लेकर जाकर कार खड़ी करनी पड़ती। उस रात रामसरन को अपना धूमिल

सपना एक बार फिर दिखने लगा जब खाना खाते हुए अमित ने कहा, "पापा जी, मैंने शहर में एक नया फ्लैट आपके लिए लिया है। चलिए आप दोनों मेरे साथ चलकर वहीं रहिए। बहुत शानदार कॉलोनी है। वैसे भी अब रिटायरमेंट के बाद अब आप यहाँ कहाँ रहेंगे?" पानी पीते हुए उसने आगे कहा, "मेरी मानिए तो इस मकान को बेचकर मेरे साथ शहर में चलिए...एक नयी कॉलोनी मेरी ही देखरेख में बन रही है, उसमें ही रहिए।" बेटे की बात सुनकर रामसरन के चेहरे पर चमक आ गयी। उन्हें लगा कि लायक बेटा इसी को कहते हैं। शायद यह उनके पूर्वजन्म का पुण्य है जो उन्हें इतना लायक बेटा मिला। वे अपने लायक बेटे पर फूले नहीं समा रहे थे।

उस रात उनकी आँखों में नींद नहीं थी। रह-रहकर अमित की मातृ-पितृभक्ति उन्हें भावविभोर किये जा रही थी। वे सोच रहे थे, 'इतना पढ़-लिखकर भी अमित में संस्कार कम नहीं हुए। कार से निकलते ही मेरे पैरों पर झुक गया। माँ से लिपट गया। कार की चाभी मेरे हाथों में थमा दी...वरना लोगों से यही सुना था कि बेटा अगर बाप से ज्यादा पढ़-लिख जाए तो बाप को अनपढ़ और गँवार समझता है। इज्जत नहीं करता, लौटकर नहीं आता।' उनकी आँखों पनीली हो गयीं। अमित के प्रति उनके मन में रह-रहकर प्यार उमड़ रहा था। सोचने का क्रम भी नहीं थम रहा था, 'लोग तो ईर्ष्या करते होंगे कि एक साधारण से मास्टर ने अपने बेटे को हीरे जैसा चमका दिया। हे प्रभु! किसी की नज़र न लगे। ठीक ही कहता है अमित, यहाँ रहकर भी क्या होगा? इतने बड़े इंजीनियर का बाप क्या इस छोटे से शहर में रहेगा भला, वैसे भी क्या है यहाँ अब सिवाय इस मकान के?' मन-ही-मन उस पुश्तैनी मकान से उनका लगाव टूटने लगा। उस मकान से तो उन्हें कुछ खास लगाव पहले से ही नहीं था। उस समय वे लखनऊ में नौकरी कर रहे थे जब उन्हें अपने पिता की असमय मृत्यु के कारण वापस आना पड़ा था और न चाहते हुए भी अकेली माँ के कारण इसी शहर में तबादला करवाना पड़ा। कई बार उन्होंने अपनी माँ को अपने साथ चलने और इस मकान को बेचने की बात कही थी लेकिन माँ थी कि एक ही ज़िद पकड़े बैठी थी, 'इस मकान में मेरी डोली आयी थी और अर्थी ही जाएगी।' माँ की इसी जिद के कारण बड़े शहर में रहने का उनका सपना, सपना ही रह गया। पर आज उनके लायक बेटे ने उन्हें फिर से अपने सपने को साकार करने का अवसर दिया है तो भला क्यों इस खंडहर होते मकान को छाती से लगाये रखना? सुधा तो वैसे ही शुरू से इस मकान को पसन्द नहीं करती। लखनऊ से यहाँ आने पर उसने कितनी ना-नुकुर की थी। महीनों तक उनसे बात भी नहीं की थी।

यूँ तो उस छोटे शहर की सुबह उन्हें कोई खास नहीं लगती थी, लेकिन उस दिन की सुबह उनके सपनों को पूरा करने के लिए ही आयी थी। नहा-धोकर वे अमित की कार से अपने मकान को बेचने की बात करने के लिए एक प्रापर्टी डीलर के पास गये। थोड़ा-बहुत ऊपर-नीचे करने पर उसने मकान के साठ लाख रूपये लगा दिये। इतने रूपयों की कल्पना भी रामसरन जी ने कभी नहीं की थी। तुरन्त 'हाँ' कर दी और एक महीने का समय लेकर वे वापस आ गये। महीना पूरा भी नहीं हो पाया था कि अमित आ गया और मकान का सारा हिसाब करके रामसरन और सुधा को अपने साथ ले गया। जाते समय आसपास के लोगों से गले मिलते हुए दोनों भावुक हो गये थे। आँखें पोंछते और नाक का पानी साफ करते हुए दोनों अमित की कार से रवाना हो गये। जब तक दिखता रहा दोनों अपने पुश्तैनी मकान को मुड़-मुड़कर देखते रहे। उस दिन उन्हें पता चला कि जड़ों से उखड़ना किसे कहते हैं लेकिन बड़े शहर, नया फ्लैट और बेटे-बहू का साथ उनकी हर भावुकता पर भारी पड़ रहा था। शीघ्र ही दोनों सामान्य हो गये।

'बड़े शहर की बात ही कुछ और होती है', रामसरन जी रास्ते भर बड़े शहर में रहने के फायदे और अपने लखनऊ के प्रवास के दिनों की बातें बताते हुए वे लगभग डेढ़-दो घंटे में उस महानगर में पहुँच गये जो उनके छोटे शहर से करीब अस्सी किलोमीटर दूर था। अमित ने कॉलोनी के गेट पर अपनी कार लगा दी। गेट के बराबर एक बड़ा-सा बोर्ड लगा था जिसमें कालोनी का नाम 'आनन्द धाम' लिखा था। नीचे कालोनी का मानचित्र बना था और उसके नीचे बायीं तरफ बिल्डर और दाईं तरफ अमित का नाम लिखा। अमित का नाम देखकर रामसरन और सुधा गदगद हो गये। चौकीदार ने सैल्यूट करते हुए कॉलोनी का गेट खोल दिया। गर्व से सीना फुलाये रामसरन फ्लैट में प्रवेश कर गये। उनका सामान पहले ही आ चुका था।

हालांकि अमित ने बेकार और पुराना सामान उसी पुश्तैनी मकान में छोड़ दिया था क्योंकि फ्लैट में सारा नया सामान था। कई अन्य सुविधाएँ बिल्डर की ओर से ही उपलब्ध करवाई गयी थीं। बस जरूरत का कुछ खास सामान, कपड़े आदि ही थे जो वे अपने साथ लाये थे। अमित उन्हें फ्लैट और कॉलोनी के बारे में बताकर तथा दो नौकरों को उनका सामान व्यवस्थित करवाने, खाना आदि बनाने का निर्देश देकर चला गया। सुधा के यह पूछने पर कि 'बहू और बच्चे कहाँ हैं?' अमित ने कहा कि 'वे भी जल्दी ही आ जाएँगे, आप लोग सेटल हो जाइए।'

वह दिन और आज का दिन, अमित अभी तक नहीं आया। उसको कई बार फोन किया लेकिन उसका नंबर या तो 'नॉट रीचेबल' या फिर 'स्विच्ड ऑफ' ही बताता है। आज जब से चौकीदार ने उन्हें बताया कि 'विदेश जाकर बसने वाले बच्चों के माता-पिता के लिए ही यह कॉलोनी बनायी गयी है। अमित भी हमेशा के लिए कनाडा चला गया है और अब कभी वापस नहीं आयेगा' तब से उनका दिल बैठा जा रहा था। चौकीदार से ही उन्हें पता चला कि यह कॉलोनी भी किसी और बिल्डर ने ले ली और अब इसका नाम 'वानप्रस्थ' रखा जा रहा है। वे फ्लैट में अन्दर जा ही रहे थे कि उनके सामने वाले फ्लैट का दरवाजा खुला था और उसके अन्दर कुछ लोगों के बात करने की आवाज़ें सुनाई दे रही थी। उनका ध्यान और कान उस फ्लैट में हो रही बातचीत पर लग गये। अन्दर कोई कह रहा था, "अरे ज्यादा नहीं चलेंगे, माँ को दमा है और पिताजी को दो बार हार्ट अटैक आ चुका है। हद-से-हद पाँच साल ही चल पाएँगे...उसी हिसाब से पैसे बताइए।" इसके आगे रामसरन कुछ नहीं सुन पाए। उन्हें लगा कि अन्दर से कोई और नहीं बल्कि उनका बेटा अमित ही बोल रहा है। अगर नहीं भी है तो भी अमित जैसा ही कोई दूसरा बेटा होगा। न जाने ऐसे कितने अमित होंगे जो अपने माँ-बाप के मरने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। "ज्यादा नहीं चलेंगे..." यह वाक्य उनके कान के पर्दे पर बार-बार टकरा रहा था। उनकी कनपटियाँ गर्म हो गयीं। मन घबरा उठा। भले ही यह आवाज़ उनके बेटे अमित की न हो लेकिन अमित ने भी तो फ्लैट बुक करते समय ऐसा ही कुछ कहा होगा। उनके मन की वीणा का तार जो अब तक अमित जैसे लायक बेटे के के गुणगान के स्वर झंकृत करता था एकदम टूट गया। मन वीणा मौन हो गयी। हाथ-पाँवों में कंपन होने लगा। घबराहट से पैर लड़खड़ाने लगे। पीड़ा की लहर मन में उठी, 'यह कौन सा लोक है जहाँ बेटे अपने माता-पिता के मरने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। माता पिता अपने बेटे को सौ दो सौ नहीं हजारों हजार साल जीते रहने की दुआ देते हैं और ये बेटे...' आँखें पनीली हो आयीं। गला रुंध गया। 'ज्यादा नहीं चलेंगे...' वाक्य मानों तीर की तरह उनके कान के पर्दे फाड़कर उनकी मस्तिष्क की नसों में घुसा जा रहा था और वे कँपकँपाते पाँवों से अपने फ्लैट की ओर जा रहे थे।

रामसरन मन-ही-मन सोचने लगे, 'ठीक ही रखा जा रहा है कॉलोनी का नाम 'वानप्रस्थ'। यह जंगल ही तो है, आदमियों का जंगल जहाँ जब जिसको मौका लगता है कमजोर पर झपट पड़ता है। कोई छल से घायल करता तो कोई बल से।' वे स्वयं भी अपने बेटे के छल के वार से इतना घायल हो चुके थे कि उनके पैर लड़खड़ाने लगे थे। उन्हें लग रहा था कि 'वे एक ऐसे चक्रव्यूह में आ फँसे हैं जिसमें उनकी मौत निश्चित है। वे ठगा-सा महसूस कर रहे थे। किसी और ने उन्हें धोखा दिया होता तो शिकायत भी करते लेकिन अपने ही खून ने उन्हें छला है कहें भी तो किससे कहें? इस कंकरीट के जंगल में तो अपनी आह भी दीवारों से टकराकर खुद को ही घायल करती है। इससे तो अच्छा पुराने समय का वानप्रस्थ था जहाँ मनुष्य अपने मन की बात पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, नदी-तालाबों से कहकर मन हल्का कर लेता था। लोग अपनी मर्जी से अपने दायित्वों के निर्वाह के बाद अनासक्त भाव को अपनाते हुए वानप्रस्थ ग्रहण करते थे। उनकी संतानें उन्हें वन न जाने के लिए हजारों मिन्नतें करती थीं, दुखी होती थीं और बार-बार उनकी कुशलता भी पूछने आती थी लेकिन आजकल तो संतान स्वयं ही अपने वृद्ध और असहाय माता-पिता को जंगल में भेज देती है, वह भी ऐसे जंगल में जहाँ दूर-दूर तक अपना कहने वाला कोई नहीं। औलादें पलटकर यह भी नहीं देखतीं कि उनके माता-पिता जिन्दा भी हैं या नहीं।' अमित के छल से वे बुरी तरह टूट चुके थे। उनका मन अस्त होता जा रहा था। फ्लैट के बाहर चहल-पहल हो रही थी कोई कह रहा था, 'सुबह वानप्रस्थ वाला नया बोर्ड गेट पर लगवा देना।'

०००

पूनम सुभाष
कौशांबी-गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो.: 9999845402

कहानी

निशाचरी

सुरेश बाबू घर आते ही खुशी से अपनी पत्नी को बताने लगे 'तुम्हें मालूम है आज अपने शो रूम में कौन आया था?' उत्सुकता से उनकी पत्नी आशा तेजी से उनकी ओर आई और आंखों से ही सवाल करने लगी। 'अपना मानू माइक्रोवेव खरीदने आया था।''
'भला वो करनाल में कैसे? वो तो आपने बताया था कि कहीं विदेश में सेटल हो गए थे।'
'हॉ, वही तो हैरानी हो रही थी मुझे। मैं पहले तो पहचान नहीं पाया। वह काफी देर से मेरे सेल्समैन से बहस कर रहा था तो मुझे अपने केबिन से बाहर आना पड़ा तो देखा मानू था। वो पिछले दो सालों से अपने परिवार के साथ अपने पुश्तैनी बंगले में रह रहा है।'

मानू सुरेश बाबू के बचपन का सहपाठी और जिगरी दोस्त था। दोनों इसी शहर के स्कूल में एक ही क्लास में पढ़ते थे। मानू जिसका पूरा नाम मानवेन्द्र था, स्कूल के बाद अपने मामा के पास लन्दन पढ़ने चला गया और फिर भारत आकर शादी करके धीरे-धीरे पूरा परिवार वहीं चला गया। सुरेश बाबू ने इसी शहर में अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद अपना इलैक्ट्रॉनिक उपकरणों का शोरूम बना लिया था जहां और उनका व्यापार अच्छी तरह चल रहा था

सुरेश बाबू अपनी पत्नी आशा से कई बार अपने बचपन की शरारतों में अपने जिगरी दोस्त मानू का जिक्र कर चुके थे इसलिए आशा ने उन्हें देखा भले ही न था मगर यह नाम उसके लिए परिचय का मोहताज नहीं था। शाम तक सुरेश बाबू की दोनों बेटियों सुमन और सुरभि को भी अपने पापा के 33 वर्ष पुराने मित्र मिलन की खबर मिल गई थी। पूरे परिवार ने यही तय पाया कि उन्हें सपरिवार खाने पर निमंत्रण दिया जाए। मोबाइल के जमाने में यह कौन सा कठिन काम था इसलिए दो दिन बाद रविवार था। देरी न करते हुए सुरेश बाबू ने अभी चार घंटे पहले सेव किए मोबाइल नंबर पर गर्मजोशी से निमंत्रण दे डाला।

रविवार को आशा और उसकी दोनों बेटियों ने प्यार से भोजन की तैयारी की। समस्या केवल यही थी कि बड़ी बेटी सुमन जो शहर के सबसे प्रतिष्ठित अस्पताल में नर्स थी उसकी उसी दिन दोपहर की ड्यूटी थी। वह छुट्टी लेने को तैयार नहीं थी क्योंकि उसकी ड्यूटी कार्डियोलोजी वार्ड में थी जहां स्टाफ की कमी मरीज के लिए जानलेवा हो सकती है। यही तय पाया गया कि सुमन उस दिन अपनी ड्यूटी रात्रि पारी की करवा ले ताकि उनके साथ आराम से लंच करने और जाने के बाद अस्पताल भी जा पाए।

मानवेन्द्र जी अपनी पत्नी रीमा, बेटी प्रज्ञा और बहन रमा के साथ आए। उनका लंदन में जन्मा पला बेटा सुजय कारोबार के सिलसिले में बाहर होने के कारण साथ नहीं आ पाया। सुरेश बाबू के साथ लंच का मजा लेते और अपने मित्र के साथ पुरानी यादें ताजा करते हुए उसके ठाट-बाट की भी तारीफ किए बिना नहीं रह सके। इसी बीच बच्चों की चर्चा होने लगी तो सुरेश बाबू ने बताया कि उनकी दो बेटियों में बड़ी बेटी एक अच्छी नर्स है और बातों-बातों में उन्होंने यह भी बताया कि किस प्रकार उन्हें दिल का दौरा पडा था तो उनकी इस बेटी ने सेवाभाव का परिचय देते हुए पूरा कारोबार संभालकर अपने पिता को हर मुश्किल से उबार लिया था। तभी से उन्होंने ठान लिया था कि अपनी इस बेटी को नर्स बनाएंगे ताकि वह औरों की भी सेवा करे। उन्होंने यह भी बताया कि आज मानवेन्द्र जी की मेजबानी में उसने अपनी ड्यूटी बदलवाकर रात की ड्यूटी करा ली है।

मानवेन्द्र जी की पत्नी तुरंत बोल उठी भाई साहब अब

'जब आप इतने सम्पन्न हैं तो बेटी को नौकरी करवाना कहां तक ठीक है'? इस पर सुरेश जी ने सफाई देते हुए कहा कि पैसा सब कुछ नहीं होता भाभी जी जब बच्ची की सेवा कईयों की प्राणरक्षा कर सकती है जैसे मेरी हुई थी तो क्या हर्ज है। पर मानवेन्द्र जी की मुंहफट बहन चुप नहीं रही उसने कहा कि नर्सों की ड्यूटी तो रात-रात भर भी रहती है और भले घर कर लड़कियां 'निशाचरी' बन कर घूमें यह कोई अच्छा थोड़े ही लगता है। मानवेन्द्र जी की कॉलेज में पढ़ने वाली आधुनिक विचारों वाली लड़की ने भी उनकी हां में हां मिलाई तो सुरेश जी की पत्नी को उनकी बात बहुत ही नागवार गुजरी। सुमन तो जैसे आहत ही होकर रह गई। सुरभि के भी गुस्से में चेहरे के भाव ही बदल गए। माहौल में भारीपन आ चुका था लेकिन एक अच्छे मेजबान की तरह सुरेश बाबू के पूरे परिवार ने उन सबको बड़े आदरमान से विदा किया।

उनके जाते ही आशा ने बडबड़ाना शुरू कर दिया, 'छि: कैसे लोग हैं... निशाचरी... भला यह भी कोई शब्द हुआ? यह तो गाली से भी गंदा लग रहा है मुझे। मेरी प्यारी सी नाइटिंगेल के लिए इतनी भद्दी भाषा .....'
'अरे भई उन्होंतो वैसे ही कह दिया होगा.. फिर यह बात उन्होंने सभी के लिए कही है सिर्फ सुमन को कुछ नहीं कहा। गलत अर्थ मत लगाओ।'
'पापा मुझे भी बहुत खराब लगा है।' सुमन भी रूआंसी होकर बोली
सुरभि बोली, 'पापा, आप कई सालों में दोस्त से मिले है इसलिए भावुक हैं और उनका पक्ष ले रहें हैं पर बद्तमीजी तो बद्तमीजी होती है।' सबकी एक राय देखते हुए सुरेश बाबू चुप रह गए।

अभी एक सप्ताह भी नहीं गुजरा था कि मानवेजी का फोन आया और उन्होंने कहा कि क्यों न दोस्ती को रिश्तेदारी में बदल लिया जाए! उन्होंने उनकी बेटी का हाथ अपने बेटे सुजय के लिए मांग लिया। सुरेश बाबू हैरान हुए और कहने लगे 'लेकिन आपको तो हमारी बेटी का नौकरी करना पसंद नहीं और मेरी बेटी अपना काम नहीं छोड़ेगी।'
'नहीं यार, वो तुम्हारी निशाचरी बेटी नहीं, हम छोटी बेटी की बात कर रहें हैं।' मानवेंद्र ने कहा। सुनकर सुरेश का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया, लेकिन अपने स्टाफ के सामने अपने मनोभाव छिपाते हुए बोले ठीक है घर बात करूंगा।
सुरेश बाबू ने घर आकर रात को खाना खाते समय मानवेन्द्र के फोन की चर्चा की तो आशा का तो मानों ब्लड़ प्रेशर बढ़ गया। सुमन चुपचाप उठकर चल दी, सुरभि दांतो से सलाद की जगह नाखून चबाने लगी।

आशा रात भर कुढ़ती रही, सुरभि को भी नींद नहीं आई, सुरेश बाबू खुद कशमकश में थे। रात भर उदास सी सुमन जल्दी उठकर तैयार होकर बिना कुछ खाए पिए अपनी सुबह की पारी के लिए ड्यूटी पर निकल चुकी थी। अनमने ढंग से नहा धोकर सुरभि ने नाश्ता बनाया। तीनों जब नाश्ते की टेबल पर बैठे तो नाश्ता खत्म करते ही सुरभि बोली 'पापा, मुझे कुछ कहना है।'
आशा ने उसकी ओर प्रश्नसूचक निगाहों से देखा तो उसने कहा कि 'मम्मी पापा, आप मानवेन्द्र अंकल को मेरे लिए हां कह दीजिए, मैं इस रिश्ते के लिए तैयार हूँ।' आशा को लगा कि वह सुरभि के इस फैसले से गश खाकर गिर जाएगी। सुरेश बाबू बोले 'बेटा, यह क्या तमाशा है, कल तक तो तुम भी गुस्से में थी।'
'मैंने कहा न आप उन्हें उनके बेटे के साथ फिर से बुला लीजिए।'
'अपनी बहन का तो सोचो उस पर क्या गुजरेगी...'
'चाहे जो हो, आप उन्हें बुला लीजिए, एक बार उनका लड़का देखने में क्या बुराई है?'
'यह उनकी अमीरी पर मर रही है, उनकी गंदी सोच पर ध्यान नहीं दे रही' आशा जी चिल्लाकर बोली।
'आप चाहे जो समझें, पर मुझे उनकी इस बात पर कोई ऐतराज नहीं है।' सुरभि अपना फैसला सुना कर किचन में बर्तन रखने चली गई। आशा बोली, 'पता नहीं किस लालच में हॉ कर रही है... उसके लंदन में पढ़ा लिखा होने पर याबड़ा कारोबार होने पर, यह लड़की तो मेरी समझ से ही बाहर होती जा रही है' सुरेश बाबू सोच रहे थे काश, मानवेन्द्र से मुलाकात ही न हुई होती।
फिर बोले 'ठीक है शाम को सुमन के घर आने पर चारों मिलकर फैसला करते हैं।'
शाम को सुमन जब घर आई तो उसने सुरभि का फैसला सुना तो सकते में आ गई। लेकिन संयम से काम लेते हुए बोली 'मम्मी-पापा, आप ही तो कहते हैं कि

रिश्ते संजोग से होतें हैं। हो सकता है इसके संजोग ऐसे ही बने हों। आखिर सुमन ने सबको मना ही लिया। सुरभि खुश तो नहीं पर आश्वस्त लगी। हालांकि सुमन भीतर ही भीतर से टूट गई थी कि इतना प्यार करने वाली छोटी बहन को उसकी भावनाओं का जरा भी ख्याल नहीं है।

मानवेन्द्र जी अगले ही रविवार सपरिवार फिर से सुरेश बाबू के घर पर उनकी छोटी बेटी के रिश्ते के लिए आ गए। ड्यूटी न होने के कारण सुमन ने अपने कमरे से निकलना उचित न समझा। आशा समझ गई थी सुमन लड़के का सामना ही नहीं करना चाहती थी। वैसे भी सुमन रंग-रूप, कद काठी, गुणों में सुरभि से बीस नहीं कही पच्चीस ही बैठती।

सुरभि ने कनखियों से देखा महंगे सूट-बूट में सजा-धजा सुजय देखने में ठीक-ठाक था। बातों बातों में मानवेन्द्र जी की बहन बोली 'अरे, बच्चों को आपस में भी तो बात कर लेने दीजिए'। सुरभि की आंखें चमक उठीं वो मानो इसी प्रतीक्षा में थी। आशा जी ने यह बात नोट की उन्हें सुरभि की यह उतावली बिल्कुल अच्छी नहीं लगी, पर मन मसोस कर रह गईं।

सुरभि सुजय को अपना घर दिखाने के बहाने बाहर लॉन में ले गई। इससे पहले सुजय बात शुरू करता सुरभि ने उससे पूछा 'आप लंदन में पढ़ने के बाद वहीं सेटल होने के बजाए इंडिया क्यों आ गए?'
'दरअसल पापा मम्मी चाहते थे कि हम लंदन में नहीं बल्कि इंडिया चलकर इंडियन लड़की से शादी करें'
'लंदन में भी तो इंडियन लड़कियां होंगी?'
हैं तो, पर उनमें भारतीय संस्कार नहीं है। हम वहां रहकर भी भारतीय सोच रखते हैं। वहां की लड़कियां गर्ल फ्रेंड्स तो बन सकती हैं, अच्छी पत्नी नहीं। आपने देखा नहीं हम तो आपकी बड़ी बहन की रात की ड्यूटी करने के कारण उसे भी पसंद नहीं कर रहे। जबकि बुआ जी ने बताया कि वह बहुत ही सुंदर है मगर हम एकदम सीधी-सादी घरेलू लड़की चाहते हैं।
सुरभि का तीर निशाने पर बैठा, 'फिर आप किसी गांव की लड़की को क्यों नहीं बहू बनाते? वो तो पूरी घरेलू और सीधी सादी होगी।'

'नहीं ऐसा भी नहीं, शहरी पढ़ी लिखी हो, पर भारतीय लड़कियों की तरह पति से दबकर रहने वाली हो, ज्यादा बाहर जाने वाली या फिर कोई निशाचरी नहीं' इस शब्द से पहले से आहत सुरभि अपने ऊपर से पूरा नियंत्रण खो बैठी। बोली, 'आप लंदन में रहकर भी भारतीय बने रहना चाहते हैं और भारत में सेवा भाव रखने वाली लड़की को जो कितने ही लोगों का बीमारी में ध्यान रखकर उनका जीवन बचाती है उसको आप अपनी पिशाच जैसे सोच कि चलते 'निशाचरी' की संज्ञा दे डालते हैं, वह भी खुद उसके और उसके परिवार के सामने... चलिए, अंदर चलिए मैं अब आपसे सबके सामने ही बात करूंगी।'
इससे पहले कि सुजय कुछ समझ पाता सुरभि तेज कदमों से चलती हुई ड्राइंगरूम में पहुंच गई जहां दोनों परिवार बैठे थे।

अंदर जाते ही सुरभि सुरेश बाबू से बोली 'पापा, मुझे तो लंदन में पढ़लिखकर बड़ा होने वाला और पत्नी को दबाकर रखने वाली दूसरों का दिल दु:खाने वाली पिशाच जैसी मानसिकता वाला पति और परिवार बिल्कुल नहीं चाहिए। इन पिशाचिनी सोच वालों से कहें कि मैं इनके परिवार में शादी करने की बजाए आजीवन कुआंरी रहना पसंद करूंगी।' और वह भागकर सुमन को उसके कमरे से बाहर निकालकर ले आई और उसे गले से लगाकर बोली 'निशाचरी' नहीं बल्कि मेरी प्यारी 'फ्लोरेंस नाइटिंगेल।'

मानवेन्द्र जी के परिवार को ऐसी उम्मीद कतई नहीं थी। सभी सकते में आ गए। सुजय तो आवाक सुरभि को देख रहा था और सुरेश बाबू और आशा मानों अपनी बेटी के इस निर्णय पर गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे।

०००

देवेन्द्र देव मिर्ज़ापुरी
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश

पुस्तक समीक्षा

धरा को महकाती साहित्यिक वल्लरियाँ "क्षितिज के छोर तक"

अकाट्य सत्य है कि साहित्य की आदि विधा छान्दस काव्य है। सर्वप्रथम छंद से ही काव्य प्रारम्भ हुआ इसलिये गीत को भी आदिविधा माना गया है। साहित्य में दो प्रकार की ही विधा हैं- गद्य और पद्य। गद्य में छन्द का अभाव रहता है जबकि पद्य की बिन छन्द के रचना किया जाना असंभव है। कवयित्री पूनम माटिया जी द्वारा प्रणीत प्रस्तुत काव्य संग्रह में विविध विधाओं में सुकवयित्री द्वारा प्रस्तुत अभिव्यक्ति में काव्य वैविध्य गुण विद्यमान है एवं तुकांत, अतुकांत, गद्य गीत आदि विधाओं का समावेश है। इस संग्रह में उचित शब्द संयोजन एवं अलंकारों से विभूषित कृति का सौष्ठव सराहनीय है।

काव्यात्मक समीक्षा

तूलिका के माध्यम से काव्य रूपी सागर में
साहित्याभिव्यंजना के भाव भरे प्यारे हैं
अभिव्यक्ति भावना की प्रतिभा के आँगन में
गीत-कविता के रूप नए-नए धारे हैं
काव्य में पिरोकर सजाये हैं सलोने "देव"
शब्द रूपी मोतियों के हार न्यारे-न्यारे हैं
"क्षितिज के छोर तक" छाया काव्य-संग्रह ये
माटिया जी ने विचार अपने सँवारे हैं।।

सरस्वती-वंदना से करके प्रारम्भ काव्य
सावन की मनुहार आपने सजायी है
प्रकृति में पंचभूत सार को सजाने वाले
ऋषियों की वैज्ञानिक नीति समझायी है
कोपल निकलने से पहले क्या होता 'देव'
बाँस की कहानी रम्य काव्य में बतायी है
जीवन के पहलू में कितने भरे हैं भाव
करने उजागर ही लेखनी चलायी है।।

संतति का देखती है माँ सदैव ही उत्कर्ष
उसकी खुशी में निज दुख भूल जाती है
सीढ़िया सफलता की चढ़ती संतान जब
वैभव अपार भी संतान पे लुटाती है
संस्कारों का दिया ज्ञान, माँ है जग में महान
"क्षितिज के छोर तक" की कथा बताती है
प्रेशर कुक्कर जैसी याद बतलायी "देव"
मन में तूफान-सा जो शोर लिये आती है।।

नई पीढ़ियों को सदा संस्कार दें उपहार
आपने सफाई-अभियान समझाया है
पर्यावरण के साथ गंदगी है नदियों में
भारत की वेदना से रूबरू कराया है
सीता-राम की पुकार, भू का करने उद्धार
कृति में अपार नव्य भाव भर आया है
नारी और साधु-संतों की दशा लिखी है 'देव'
दहेज़ के दानव का रूप भी बताया है।।

गीत-कविता-कवित्त साहित्य के कानन में
कुंडलिया छन्द संग आभा बिखरा रहे
मन में विशेष अभिलाषा रहीं आपके में
राम, कृष्ण, देश, मित्र, भावना में भा रहे
चाहत के नए-नए हैं आपने सँजोये रंग
भाव अभिभावी संग भावना सजा रहे
अखिल कृति में कामना ही कामना है 'देव'
नव्य अहसास भव्य लालसा जगा रहे।।

जय माँ झंडेया वाली रचना लिखी विशेष
प्यार में लटें जज़्बात की भी बिखरायीं हैं
संस्कृत भाषा की लघु झलक कृति में दिखी
कृष्णपक्ष-शुक्लपक्ष बातें समझायीं हैं
लोकतंत्र रक्षित हो, हो सके कभी न हार
राष्ट्र भावना की धार कृति में बहायीं हैं
जब कभी दिल की ज़मीं पर पड़े क़दम
जीवन की भी विविध भावना जगायीं हैं।।

शब्द-शब्द बोलता है, मन को टटोलता है
खोलता है गाँठ अभिलाषा की जो मन में
पद्य और गद्य अन्य भी तुकांत-अतुकांत
विविध विधाओं की छवि धरा गगन में
नज़र के सामने आ, फेल हो गये का भाव
कृति का कलेवर हुलास भरे तन में
दर्द गईया मईया का भी कलयुगी लिख 'देव'
भावना जगा रहीं हैं आप जन-जन में।।

खोटे सिक्के को प्रतीक मान रची रचना है
सपनों का बादल प्रतीकों में सजाया है
स्वेटर के फंदे का प्रतीक बूँद लिया मान
किन्तु अर्थ में समूल सागर समाया है
लोरी को प्रतीक माना निंदिया की घुट्टी देव
कविता में भाव अभिलाषा का जगाया है
शुभकामनायें मेरी हैं अनन्त 'पूनम जी'
"क्षितिज के छोर तक" काव्य पहुँचाया है।।

साहित्यिक साधना में क्षितिज के छोर तक
परचम आपने अनूठा लहराया है
छन्दबद्ध, छन्द-मुक्त गद्य कवितायेँ लिखीँ
नाटिकायें, संस्मरण, अन्य को रचाया है
शोधपत्र, यात्रा का वृत्तांत, अन्य लिख 'देव'
साहित्यिक-उपवन ख़ूब महाकाया है
आपके व्यक्तित्व में कृतित्व की छटा' अनूप
"क्षितिज के छोर तक" भाव पहुँचाया है।।

सुकवयित्री पूनम माटिया जी को कृति के प्रणयन के लिये बहुत बहुत बधाई एवं साधुवाद व शुभकामनायें।

पुस्तक : क्षितिज के छोर तक
लेखिका : पूनम माटिया
प्रकाशक: साहित्यपीडिया प्रकाशन, नोएडा
ISBN: 978-93-5924-552-2
प्रकाशन वर्ष : 2024

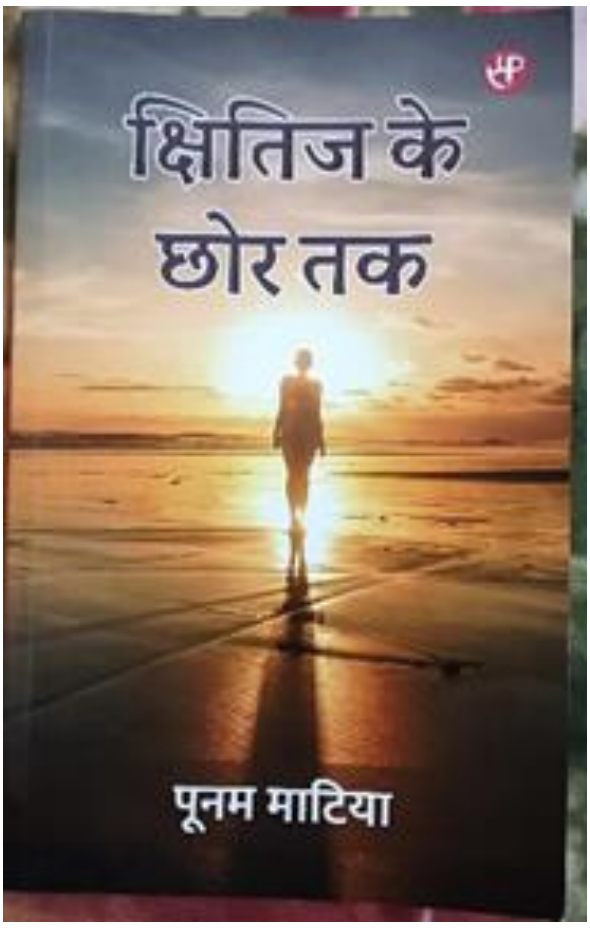

०००

डॉ.सुभाष चन्द्र दीक्षित
लखनऊ-उत्तर प्रदेश

पुस्तक समीक्षा

स्वाभिमान : नए संदर्भों का खंड काव्य

सम्मान्य मैथिल जी का चिंतन प्रवण व्यक्तित्व है। जिसका पुष्ट प्रमाण है, उनका खंडकाव्य स्वाभिमान। इस कृति के माध्यम से उन्होंने एक एसे एतिहासिक पात्र की वृत्ति, प्रवर्ति का मंचन किया है, जो विश्वविश्रत है। रामचंद्र के सामने दशाशन एक चट्टान की भांति विराजमान है। अब यह जाता है पाठक या दर्शक का द्रष्टिकोण। आचार्य मम्मट ने भले ही अपने काव्यप्रकाश में इस लोक विश्वास की स्थापना की है कि 'रामादिवतप प्रवर्स्ततव्यम न रावण दिवत।' किंतु लंकेश को सर्वथा नकारने का भाव नहीं है। यही द्रष्टि श्री मैथिल जी की है। श्री राम का आदर्श चरित्र सर्वथा अनुकरणीय है। वे हमारे रोम-रोम में बसे हुए हैं, तथापि राम कथा का प्रतिनायक अपने तर्कों से सोचने को बाध्य करता है, यही दृष्टि कवि की काव्य सृष्टि का आधार है। उनका यह वक्तव्य सर्वथा समीचीन है-

नहीं किसी पर दोषारोपण
इसका ध्यान मुझे रखना है।
वादी प्रतिवादी तो सम हैं,
तर्क तुला प्रस्तुत करना है।।

कवि की इस दृष्टि का प्रतिफलन विवेच्य खंडकाव्य में सुष्ठरूप से विद्यमान है। श्री मैथिल जी का व्यक्तित्व बहुआयामी है। उन्होंने सामाजिक एवं साहित्यिक दायित्वों का गहन निष्ठा से निर्वहन किया है। समाज में चेतना लाने के लिए वे सदाशय नामक संस्था का गठन कर उसकी सार्थकता के लिए अहर्निश तल्लीन हो जाते हैं। इसके प्रतिफलन का बड़ा वर्ग साक्षी रहा है। इसी प्रकार साहित्य के लिए विविध विधाओं में सफल लेखन, अभिनव, मौलिक प्रयोग, मंच संचालन में उनकी सक्रियता सर्वथा अनुकरणीय एवं वंदनीय है।

'स्वाभिमान' खंडकाव्य में मैथिल जी की शैली सर्वत्र मनोहारिणी और अकाट्य है। प्रभु राम सर्वदा वंदनीय हैं तो दशानन भी विचारणीय है। अपना अभिमान भी अपरिहार्य है:

मात्र विजयश्री मिल जाने पर
तुम जैसों ने दीप जलाए।
जीते लेकिन मेरे जीते
राम नहीं लंका आ पाए।।

इस छन्द से ठीक पहले कवि की उदघोषणा उसके व्यक्तित्व में स्वाभिमान की प्रचंड ज्वाला को दर्शाती है ....

अंतिम लक्ष्य सभी का रहता
विरलाजन ही जा पाता है।
राम रोककर मुझे दिखाऐं
रावण स्वर्ग धाम जाता है।।

अस्तु इस कृति को नीर क्षीर विवेक पूर्वक प्रशिक्षण करने पर पाठक/ श्रावक का मनभाव विभोर हो जाता है।

"स्वाभिमान" खंड काव्य में कविवर मैथिल जी की दोहावली भी उप निवद्ध है, जिसमें 95 दोहे हैं। ये विविध वर्णी दोहे जीवन के शाश्वत एवं लौकिक पक्षों का मार्मिक उदघाटन करते हैं .....

आज तलक मिलिबो भलो
नहीं संग्रह सों काम।
पंछी हैं प्रभु आसरे
कल को देखो राम।।

यह संतोष वृत्ति वस्तुत: मानवता का श्रंगार है। कैसा सुंदर आदेश है। एसे दृष्टांतों से सुसज्जित दोहे बड़े

ही प्रभावोत्पादक हैं उनका यह परामर्श आज तथाकथित पाखण्ड पर तीव्र प्रहार करता है--

"सुविधा संग सम्पन्नता, लिये भव्यता सन्त ।
मनवा क्यों है बावरो, सन्त मिलें कहुं अन्त।।"

दोहों में विन्यस्त कवि की अन्योक्तियां भी हृदयावर्जक हैं--

"अरे बाज!अनरथ भयो, लगो बहेलिया तीर।
फुदक चिरैया मारिकें, कबहुं उठी नहिं पीर।।"

कवि ऐसी श्रेष्ठ प्रस्तुतियों के लिए हार्दिक साधुवाद के पात्र हैं। प्रभावशाली शब्दसमुच्चय, जीवनोपयोगी भावोद्गार,'लीक' से हटकर मौलिक चिन्तन का काव्य में उपस्थापन करने पर कवि का हार्दिक वन्दन!!

पुस्तक : स्वाभिमान (खंड काव्य)
लेखक : शिव शंकर मैथिल
प्रकाशक: द वर्डविगल पब्लिकेशन
ISBN: 978-81-978668-1-4
प्रकाशन वर्ष : 2024

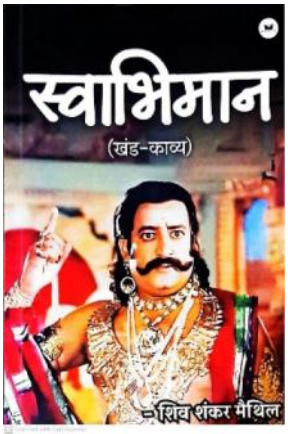

ooo

सुविचार

- *सम्मान अधिकारपूर्वक नहीं पाया जा सकता – उसे कमाना पड़ता है।*
- *जब लोगों की कड़वी बातें भी आपको मीठी लगने लगें और दुख में भी आप मुस्कुरा लें, तो समझ लेना आपको जीवन जीना आ गया।*
- *कुंए में डाली बाल्टी तभी भरती है जब वो झुकती है, जिंदगी में भी; जो झुकता है वही पाता है।*
- *एक अच्छा इंसान अपनी मधुर वाणी से जाना जाता है, वरना अच्छी बातें तो किताबों में भी लिखी होती हैं।*
- *दुनिया की हर मुश्किल आपके साहस के आगे घुटने टेक देती है।*
- *हमें अपने अच्छे दिनों में उन लोगों को नहीं भूलना चाहिए, जिन्होंने बुरे दिनों में हमारा साथ दिया था।*
- *धीरे-धीरे ही सही मगर हमेशा मंजिल की ओर बढ़ते रहना चाहिए क्योंकि रुका हुआ तो पानी भी सड़ने लग जाता है।*

मुकेश निर्विकार
बुलंदशहर-उत्तर प्रदेश
मो. 7409622722

पुस्तक समीक्षा

'बजे मृदंग': क्षणों में सहेजी गईं युगीन अनुभूतियाँ

**"दीप सी जले
तिल-तिल सुलगे
अम्मा न बुझे"**

-जैसे कालजयी अनुभूतिपरक हाइकु प्रणेता, सुप्रसिद्ध कवि-साहित्यकार, शिक्षाविद्, डॉ. देवकी नंदन शर्मा को उनकी नई काव्य-कृति 'बजे मृदंग' के प्रकाशन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ!

यह हाइकु-संग्रह ए0आर0पब्लिशिंग कम्पनी, के0 37, अजीत विहार, दिल्ली-110084 से प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह की भूमिकास्वरूप वरिष्ठ साहित्यकारों-- आदरणीय डॉ0 जगदीश व्योम, प्रोफेसर स्वप्ना उप्रेती एवं डॉ0 लवलेश दत्त--के अभिमत समाविष्ट हैं तथा पुस्तक के रचयिता डॉ0 देवकीनन्दन शर्मा सर का 'क्षण का महोत्सव' नामक आत्मकथ्य है।

300 हाइकु कविताओं की यह श्रृंखला 05 खण्डों में विभाजित है, जिनके नाम कवि ने क्रमशः--वंदन, प्रकृति, पर्व, ज़िन्दगी, प्रकीर्ण--दिये हैं।

वंदन खण्ड में क्रमशः गणपति, शिव, जगदम्बा, राम, कृष्ण, राधा को समर्पित हाइकु हैं। प्रकृति खण्ड में वसंत, फागुन, गर्मी, सावन व पर्यावरण केन्द्रित हाइकु कविताएं हैं। पर्व सर्ग शरद, पूर्णिमा, करवा चौथ, दीवाली, होली, नववर्ष व प्राणप्रतिष्ठा उप खण्डों में विभाजित है। ज़िन्दगी सर्ग में 'खेल नहीं ज़िन्दगी', 'जलायें प्रीत दीप', 'लुभाते आशियाने' व 'तम में उगे सूर्य' नाम से हाइकु प्रस्तुत किये गये है। प्रकीर्ण सर्ग का प्रसार अपने नाम के अनुरूप ही माँ, मातृभाषा, नारी, बेटियां, बच्चे, गीता, योग, क्रिकेट, कोरोना, राजनीति, अध्यात्म आदि में फैला हुआ है।

इस संग्रह में कवि के आत्मकथ्य के शब्द पाठक की काव्य-चेतना में नवीनता का संचार करते हैं। कवि के अनुसार कविता चिर-नवीना और अक्षतयौवना है। नये रूपों और नये नामों के साथ उसका कारवाँ अनवरत बढ़ता रहता है। कविता विभिन्न काव्य-विधाओं से गुजरते हुए गहन अर्थ-व्यंजक हाइकु विधा तक पहुँची है। बकौल कवि, भले ही हाइकु क्षण की कविता है, तथापि यह एक गंभीर काव्य-विधा है। इसकी छोटी सी परिधि में व्यापक जीवन और जगत् के सभी पक्ष समाविष्ट हैं। कवि ने सच ही, प्रकृति, धर्म, अध्यात्म, संस्कृति, राजनीति विज्ञान आदि के साथ-साथ जीवन की जटिलताओं, संघर्षों के साथ सौन्दर्य, प्रेम पीड़ा जैसे कोमल विषयों से निमज्जित क्षणों को अपने हाइकु में सहेजा है। कवि के अनुसार, ये क्षण हमारी संवेदनाओं पर कुछ इस तरह से काबिज हो जाते हैं कि हम इन्हें चाहकर भी विस्मृत नहीं कर पाते हैं।

आदरणीय गुरूदेव में क्षणों की कविता (हाइकु) में युगीन काव्य अनुभूतियों को अत्यन्त प्रभावशाली तरीके से सहेजा है, इसीलिए इस संग्रह के हाइकु की अनुगूंज पाठक की स्मृति में देर तक बनी रहती है! इस संग्रह के अनेक हाइकु न केवल कहावतों सरीखा महत्व रखते हैं, अपितु उद्धृत किये जाने योग्य हैं!!

लेखक ने अपनी इस कृति के माध्यम से वर्तमान अवसादग्रस्त निराशोंमुखी हिंदी काव्य परिदृश्य को जीवनोन्मुखी, उत्सवधर्मी, प्रकृतिकेन्द्रित, आत्मिक

आह्लादसम्पन्न काव्य परंपरा से अभिसिक्त सांस्कृतिक मूल्यों से समृद्ध कविता का दर्पण दिखलाया है। साथ ही इसमें हमें भारतीय जीवन-दर्शन के सभी पहलुओं के दिग्दर्शन भी होते हैं। इस हाइकु संग्रह की भाषा स्वयं में उदात्त भाव का निर्वहन करती है, जिस ओर आधुनिक पीढ़ी का कदाचित ध्यान नहीं है।

हाइकु-संग्रह 'बजे मृदंग' के रूप में अभिव्यक्त सार्थक शब्द-साधना के लिए आदरणीय गुरूदेव डॉ0 देवकीनन्दन शर्मा सर को मेरा हार्दिक साधुवाद एवं शुभकामनाऐं!

पुस्तक : बजे मृदंग
लेखक -: डॉ. देवकीनन्दन शर्मा
प्रकाशक : ए.आर. पब्लिशिंग कंपनी
के. 37, अजीत विहार, दिल्ली—110084
ISBN : 9789388130684
प्रकाशन वर्ष 2024

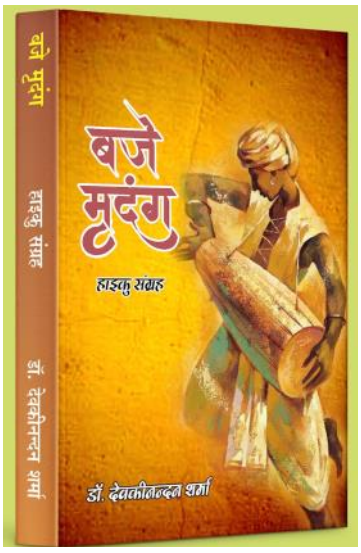

०००

डॉ. मोनू सिंह
छपरौली-बागपत-उत्तर प्रदेश
मो. 9058127616

डॉ. देवकीनंदन शर्मा के हाइकु संग्रह का नाम मुझे बेहद पसंद आया है, इस शीर्षक में गहन व्यंजना विन्यस्त है। मृदंग का इतिहास लगभग दो हजार वर्ष पुराना है। मृदंग तबले और ढोलक का पूर्वज भी है। मृदंग का ही छोटा रूप तबला और ढोलक हैं। पौराणिक मान्यता के अनुसार जब भगवान शिव ने तांडव नृत्य किया, तब नंदी ने मृदंग बजाया। मृदंग अपने प्रारम्भिक रूप में मृदा यानी मिट्टी से बनता था, इसमें कालान्तर में परिवर्तन होता चला गया। शीर्षक के अनुरूप ही इस हाइकु संग्रह के अधिकांश हाइकुओं का सम्बंध मिट्टी अर्थात लोक से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। डॉ शर्मा को लोक संस्कृति की बहुत सूक्ष्म एवं गहन समझ है। भारत के गांव, खेत, खलिहान, तीज, त्यौहार, होली, दीवाली, बसंत उनकी आत्मा में बसते हैं। एक प्रकार से कहना चाहिए कि यह संग्रह भारतीयत अस्मिता और गौरव की अभिव्यक्ति है। इसका दूसरा सिरा भगवान शिव से जुड़ा है, अर्थात आस्था इसका प्राण है। संग्रह में एक पूरा खंड गणपति, शिव, जगदम्बा, राम, कृष्ण और राधा को समर्पित है। समूचे संग्रह को पढ़ते हुए बार-बार यह अनुभूति होती है कि इनमें मृदंग की थाप और अनगूजें ध्वनित हो रही हैं। यह संग्रह भौतिकता की चकाचौंध और यांत्रिकता में डूबी पीढ़ी को कृत्रिम छवियों से बाहर निकलकर प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य एवं भारतीयता के गाढ़े रंग में पाठकों को डुबोता है। यह संग्रह भारतीयता और लोक का उत्सव रचता है।

०००

गीता रस्तोगी 'गीतांजलि'
मोदीनगर-गाजियाबाद-उत्तर प्रदेश
मो. 8279798054

पुस्तक समीक्षा

हिन्दीभाषियों से प्रश्न पूछती कृति: हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध

क्या आपने कभी किन्हीं दो घनिष्ठ मित्रों को वार्तालाप करते हुए सुना है? निश्चय ही ऐसा हुआ होगा। तब आपने इस बात पर भी ध्यान दिया होगा कि वे लोग अपनी मातृभाषा में ही बातें कर रहे थे। जी हां, किसी भी मानव की सर्वाधिक प्रिय व सहजता से बोली जाने वाली भाषा, उसकी मातृभाषा ही होती है; जिसे बोलते समय कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता। इसीलिए हम भारतीयों के लिए हमारी मातृभाषा हिंदी को बोलना भी अत्यंत सहज व सुखदायक है।

पुस्तक 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध' का मूलभूत उद्देश्य उन लोगों से संवाद स्थापित करना है जो अपनी राजभाषा, राष्ट्रभाषा और मातृभाषा के प्रति उदासीन ही नहीं हैं अपितु एक विदेशी भाषा को अपनाकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हैं। लेखक, डॉ. ईश्वर सिंह जी ने इस पुस्तक में हम भारतीयों की एक ऐसी समस्या की ओर, जो हमारे राष्ट्रीय बोध पर प्रश्न चिह्न लगाती है, हमारा ध्यान आकर्षित करने की केवल चेष्टा ही नहीं की वरन इसके उन्मूलन के लिए अत्यधिक श्रम भी किया है।

कहते हैं कि इंसान अपनी आदतों की गुलामी करता है। हम सभी अपने व्यवहार का यदि सूक्ष्मावलोकन करें, तो पाएंगे कि हम दैनिक जीवन में कई कार्य केवल अभ्यास के वशीभूत होकर करते हैं। अक्सर हम ऐसे अनेक कार्य करते हैं जिन्हें, हम जानते हैं कि न करते तो बेहतर होता; तब भी करते हैं क्योंकि उन्हें करने का अभ्यास हो गया है। ऐसा ही एक कार्य, व्यवहार में अन्य भाषाओं की अपेक्षा हिंदी भाषा का कम प्रयोग करना है।

यद्यपि हम सब हिंदी भाषी हैं; हम अपने देश से प्यार करते हैं, अपनी भाषा से प्यार करते हैं। इसके बावजूद किसी अंग्रेजी वक्ता के धाराप्रवाह वाचन से हम तुरंत प्रभावित हो जाते हैं। इसके स्थान पर कोई हिंदी का विद्वान हिंदी में अपना वक्तव्य दे रहा हो तो हमारी दृष्टि में उसका कोई अधिक मूल्य नहीं होता। यह सर्वथा अनुचित है। अंग्रेजी के वक्ता का सम्मान उसकी विद्वत्ता और भाषा ज्ञान के कारण अवश्य ही होना चाहिए मगर हिंदी के विज्ञ जन को हम उसकी तुलना में हेय दृष्टि से देखें, यह कदाचित उपयुक्त नहीं। वर्तमान में अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा प्राप्त करने के कारण जब किसी को हिंदी भाषा का अल्पज्ञान होता है तब भी वह इसे अपना अवगुण नहीं, गुण समझता है। अतः अपनी मातृभाषा, राजभाषा और राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति हमारे दृष्टिकोण में ही सुधार की आवश्यकता है। लेखक डॉ. ईश्वर सिंह कई दशकों से राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में कार्यरत हैं, जिन्होंने 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध' के माध्यम से इस मानसिकता की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है।

लेखक के अनुसार 'भाषा केवल विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं, वरन यह व्यक्ति की पहचान व उसके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है। व्यक्ति के मुंह से निकले शब्द ब्रह्मास्त्र की तरह हैं। जो अपना प्रभाव अवश्य ही छोड़ते हैं।' अतः भाषा के ज्ञान के साथ-साथ उसके सामाजिक व

व्यावहारिक प्रयोग को सीखना भी आवश्यक है। जीवन में भाषा के महत्व को समझाते हुए लेखक ने कहा है, "समाज में लोगों के साथ आपके रिश्ते किस प्रकार के हैं, यह आपकी भाषा तय करती है। भाषा व्यक्ति की खुशियों का भी आधार है। साथ ही किसी न किसी रूप में भाषा व नैतिक मूल्य भी एक दूसरे पर अपना प्रभाव डालते हैं। साथ ही व्यक्ति अपने जीवन में कितना संतुष्ट व सफल है, इसको भी उसकी भाषा प्रभावित करती है।" लेखक के अनुसार, व्यक्ति की मानसिकता भी उसकी भाषा द्वारा अभिव्यक्त होती है। हमारे मन में बहुत से अवरोध हैं जो हमें स्वाभाविक रूप से हिंदी भाषा का प्रयोग करने से रोकते हैं। यह बात हमारे व्यक्तिगत जीवन और कार्यालय, दोनों स्थानों पर समान रूप से लागू होती है। इन सारे अवरोधों का भाषाविद् डॉ. ईश्वर सिंह ने इस पुस्तक में भिन्न-भिन्न अध्यायों में विस्तार से वर्णन किया है। इन अध्यायों से कुछ महत्वपूर्ण अंश आपके अवलोकनार्थ यहां प्रस्तुत हैं:

"भाषा में प्रयुक्त मुहावरे हमारी संस्कृति को दर्शाते हैं। इन्हें संस्कृति विशेष में पला-बढ़ा व्यक्ति आसानी से समझ सकता है, जबकि किसी अन्य संस्कृति से आए व्यक्ति के लिए इन्हें समझना मुश्किल होता है।"

"प्रश्न यह है कि यदि हमको गलतियां करके अंग्रेजी भाषा को सीखने में कोई परहेज नहीं है तो फिर हिंदी को सीखने में परहेज क्यों है? हिंदी तो हमारी अपनी भाषा है। हमें इस बात पर शर्मिंदगी होनी चाहिए कि हमें अपनी भाषा नहीं आती, न कि इस बात पर कि हमें एक विदेशी भाषा नहीं आती। यह जताने में कि हमें हिंदी नहीं आती या हमें अंग्रेजी आती है, गौरव की अनुभूति कैसी? किसी के कह देने या मान लेने भर से हिंदी अंग्रेजी से छोटी तो नहीं हो सकती।"

"किसी अहिंदी भाषी देश में नहीं, किसी यूरोपियन या अमेरिकन देश में नहीं, हिंदी भारतवर्ष में राजभाषा का संवैधानिक दर्जा पाने के बाद भी, व्यावहारिक रूप में राजभाषा नहीं बन पा रही है।"

"दुर्भाग्यवश हमारे मन की स्थिति कुछ विरोधाभासी है। हम सिद्धांत रूप में चाहते हैं कि हिंदी देश की राजभाषा बने और हमारा सारा कार्य हिंदी में ही हो। किंतु व्यवहार से हम अंग्रेजी का प्रयोग करते हैं और हमें कोई संकोच नहीं होता, ऐसा करते हुए। इस प्रकार हिंदी को राजभाषा के रूप में स्थापित करने की इच्छा उस व्यक्ति द्वारा आगरा पहुंचने की इच्छा की तरह है, जो दिल्ली से चंडीगढ़ की ट्रेन में बैठा हुआ है।"

लेखक के अनुसार, दूसरों की राय भी हिंदी के प्रयोग में एक अवरोध है और दूसरों का अंधानुकरण करने का स्वभाव भी एक बाधा ही है। ऐसी स्थिति में किसी भी श्रेष्ठ कार्य की तरह हिंदी बोलने में भी हर किसी को पहल करनी चाहिए।

"हिंदी को लागू करने के अवरोध रूपी जल को हमें आज भी उसमें से गुजर कर पार करना है और कल भी। जितना विलंब करते जाएंगे, अवरोध उतने ही सबल होते जाएंगे। फिर कल क्यों? आज और अभी क्यों नहीं?"

"जरूरत है मजबूत इरादे से संघर्ष के पथ पर निकल पड़ने की। सफलता मिलना तो तय ही है। हो सकता है कि यह सफलता आपकी आशाओं के अनुरूप न हो किंतु आने वाली पीढियों के लिए काफी हद तक सफलता का मार्ग तो प्रशस्त कर ही देगी।"

इन सारे विरोधों के बाद एक अवरोध अतिशुद्धता का भी है। "इसलिए यदि हम चाहते हैं कि हिंदी का विकास हो, हिंदी का प्रचार और प्रसार हो तो हमें अन्य भाषाओं के शब्दों को भी अपनाना चाहिए। विशेषकर जो शब्द हमारी भाषा में रच-बस गए हैं, उन्हें हमें हिंदी के ही शब्द मान लेना चाहिए।"

"प्रत्येक कर्मचारी के मन में यह शंका बनी

रहती है कि यदि वह हिंदी में कार्य करेगा तो कहीं लोग उसे 'हिंदी वाला' के रूप में न जानने लगें। अत: 'हिंदी वाला' के रूप में हमारी पहचान न बने, यह सोच भी एक अवरोध ही है।"

इसके अतिरिक्त क्षेत्रवाद की समस्या भी सामने आती है और लोग हिंदी और अपनी प्रादेशिक भाषा की तुलना करने लगते हैं। लेखक ने एक और बात की ओर ध्यान दिलाया है; वह है 'दिखावे की राष्ट्रभक्ति'। लोग जब आडंबर करने के अभ्यस्त हो जाते हैं तो भी भावनात्मक रूप से किसी भी चीज से नहीं जुड़ पाते। भाषा के चुनाव का प्रश्न भी इससे विलग नहीं है।

जिस प्रकार आम आदमी बात-बात में सरकार को दोष देना अपना अधिकार समझता है या 'सरकार को ही समस्त उत्तरदायित्वों को निर्वाह करना है', ऐसी सोच रखता है; ठीक इसी प्रकार 'हिंदी भाषा का कार्यान्वयन करना राजभाषा विभाग या राजभाषा अधिकारी का ही कार्य है' की सोच आम आदमी में देखी जाती है। यह धारणा गलत है। लेखक ने कार्यालय में नियुक्त हिंदी अनुवादकों की संख्या तथा राजभाषा विभाग, भारत सरकार द्वारा कार्यालयों के लिए निर्धारित राजभाषा के लक्ष्यों की तुलना करते हुए इस विचार की अव्यावहारिकता को भी रेखांकित किया। इसके विपरीत यह सत्य है कि कोई भी महान कार्य एक मिशन की भांति होता है। वहां जन-जन के व्यक्तिगत प्रयास ही सामूहिक रूप से एकजुट होकर मिशन की सफलता का हेतु बनते हैं। यदि हम सचमुच अपने राष्ट्र से प्रेम करते हैं तो भारतवासी होने के नाते हम सबको कृतसंकल्प होना होगा कि हिंदी को स्वयं अपने व्यवहार में अपनाएं व आसपास के लोगों के लिए प्रेरणा बनें।

डॉ ईश्वर सिंह जी ने अथक परिश्रम, अपने अनुभव, अध्ययन व शोध कार्य के परिणाम स्वरुप इतने सारे तथ्यों को इस एक पुस्तक 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक विरोध' में संग्रहीत कर, पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। इसके लिए वह सचमुच बधाई के पात्र हैं। मैं भगवान से उनके उज्ज्वल भविष्य की प्रार्थना करती हूँ।

पुस्तक : हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध
लेखक : डॉ. ईश्वर सिंह
प्रकाशक: ए. आर. पब्लिशिंग कंपनी, दिल्ली
ISBN: 9789388130127
प्रकाशन वर्ष : 2019

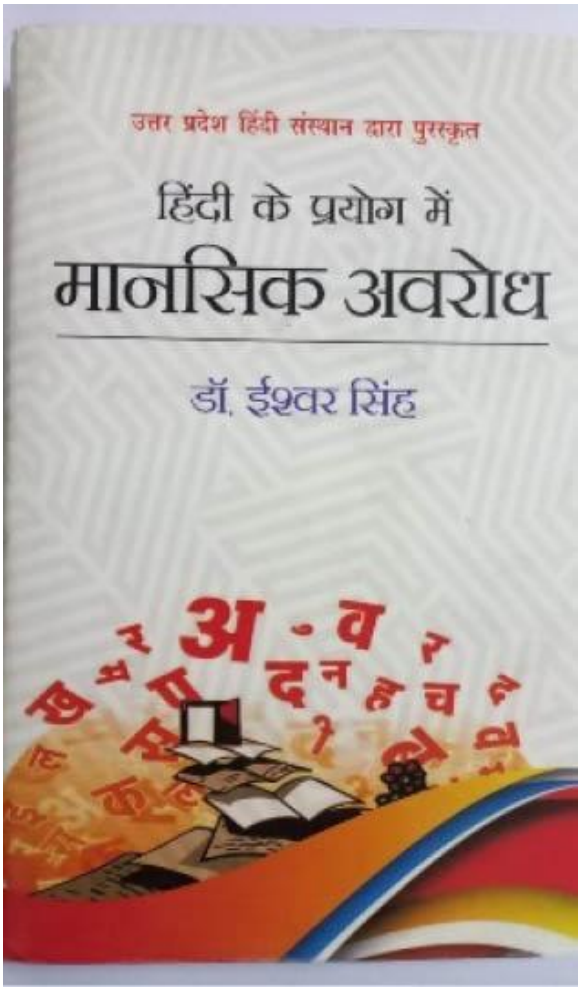

०००

आलोक यात्री
गाजियाबाद – उत्तर प्रदेश
मो. 7840052777

विरासत

स्मृति शेष काक

काक साहब 'कथा रंग' परिवार के सरपरस्त होने के साथ-साथ यात्री परिवार के अभिन्न सदस्य भी थे। बहुत ही कम लोगों को मालूम होगा कि उनका वास्तविक नाम हरीश चंद्र शुक्ला है।

उनके कार्टून के माध्यम से काक जी से मेरा परिचय बालपन से ही था। हम बचपन से ही विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में उनके कार्टून देखते आ रहे हैं। काक जी से साक्षात परिचय से पहले मैं व्यक्तिगत तौर पर सुप्रसिद्ध कार्टूनिस्ट श्री आबिद सुरती जी और श्री सुधीर तैलंग जी के संपर्क में आ चुका था। बचपन में काक नाम बड़ा अजीब लगता था और कई तरह के कौतूहल पैदा करता था। बचपन में एक शब्द अक्सर सुनने को मिलता था, 'हुड़कचुल्लू'। जिसे सुनकर हम सोचते थे कि हुड़कचुल्लू कोई ऐसा शख्स होता होगा जिसकी चूलें हिली हुई होती होंगी। और मैं यह मान बैठा था कि आबिद सूरती जी दिखने में हुड़ुकचुल्लू होंगे। लेकिन वह आकर्षक छवि और व्यक्तित्व के आदमी निकले।

काक साहब को लेकर मन और दिमाग में जो संशय था वह भी उस दिन दूर हो गया जब एक अखबार में उनका चित्र छपा देखा। उनका व्यक्तित्व भी बड़ा आकर्षक था। उनके व्यक्तित्व की भव्यता देखते ही बनती थी। उनसे मेरा व्यक्तिगत साक्षात्कार लगभग बीस बरस पूर्व हुआ था। उस समय मैं दैनिक जागरण में कार्यरत था और सांस्कृतिक कार्यक्रमों की कवरेज मैं ही देखता था। वसुंधरा के किसी संस्थान के कार्यक्रम में वह मुख्य अतिथि थे। वह उनसे मेरा पहला साक्षात्कार था। पहली ही मुलाकात में उन्होंने मुझे अपनी स्नेह वर्षा से तरबतर कर दिया। इसके बाद उनसे मेल, मुलाकात और बात का अंतहीन सिलसिला शुरू हो गया। जो लगभग एक माह पूर्व पिताश्री के श्रद्धांजलि (बरसी) तक चला। उनके साथ मेरे गहरे निजी एवं शिष्यवत संबंध रहे। लंबे समय तक उनकी आत्मीयता और आशीर्वाद प्राप्त करने का सौभाग्य भी मुझे मिला।

काक साहब से गाहे-बगाहे फोन पर बात होती रहती थी। कभी फोन वह लगा लेते थे, कभी मैं लगा लेता था। एक दिन मैंने उनके 'काक' होने के रहस्य को जानना चाहा। उन्होंने जो बताया वह तो पूरा याद नहीं है अलबत्ता वह संभवतः कानपुर के रहने वाले थे। मूलतः वह मैटर्लर्जिकल इंजीनियर थे। पढ़ते समय से ही उन्हें चित्रांकन व कार्टून बनाने का शौक था। प्रारंभिक दौर में वह अखबारों में बतौर फ्रीलांसर कार्टून बनाते थे। कार्टून के प्रेम की वजह से उन्होंने अपनी नौकरी से इस्तीफा दे दिया था और क्रिएटिविटी के क्षेत्र में फुल टाइम आ गए थे।

जनसत्ता, नवभारत टाइम्स, दैनिक जागरण, राजस्थान पत्रिका इत्यादि से जुड़े रह कर उन्होंने कार्टून जगत में अपनी एक अलग पहचान बनाई थी। व्यंग्य की अपनी अनोखी शैली के बूते काक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय जटिल राजनीतिक विषयों को बहुत ही सरलता से आम आदमी से जोड़कर अपने कार्टून में प्रस्तुत करते हैं। एक हिंदी कहावत के अनुसार काक अर्थात पक्षी कौवा जो किसी के झूठ पर अपनी कर्कश ध्वनि से आवाज़ उठाता है, वहीं उनके कार्टून

की ध्वनि होती थी।

काक कार्टूनिस्ट्स क्लब ऑफ इंडिया के प्रथम निर्वाचित अध्यक्ष पद पर भी रह चुके थे। जमीनी स्तर पर लोगों की समस्याओं के बारे में शानदार समझ की वजह से काक को जनता के कार्टूनिस्ट (cartoonist of masses) के रूप में भी जाना जाता है। आर. के. लक्ष्मण के आम आदमी के विपरीत, काक का आम आदमी एक मूक दर्शक नहीं है, बल्कि एक मुखर टीकाकार है जो बोलने का कोई भी मौका नहीं चूकता।

आज से लगभग सात बरस पहले 'कथा संवाद' का सिलसिला शुरू हुआ था "मीडिया 360 लिटरेरी फाउंडेशन के बैनर तले। कथा संवाद के प्रारंभिक काल से ही काक साहब हमारे और इस संस्था के सरपरस्त थे। वह गाहे-बगाहे कथा संवाद में तशरीफ़ ले आते थे। कथा संवाद कार्यक्रम स्थल पर उनके लिए एक सोफानुमा विशेष कुर्सी का प्रबंध किया गया था। जिसे हम काक साहब का 'तख्त ए ताउस' कहते थे और वह अपने सिंहासन पर किसी बादशाह से विराजमान नज़र आते थे। उनके आगमन से कथा रंग का आयोजन जीवंत हो जाता था।

उनका स्नेह अकेले मुझ तक ही सीमित नहीं था। कथा रंग के सभी सदस्यों के वह सरपरस्त थे। काक साहब अक्सर कहा करते थे कि तुम लोगों ने मुझे जीवित कर रखा है। कथा रंग के आयोजनों से वह खासे संतुष्ट रहते थे। एक दिन प्रसन्न होकर उन्होंने एक विशेष कार्टून भी बनाया था। तबीयत ठीक न होने के बावजूद वह बिटिया परिधि की शादी से लेकर कथा रंग के वार्षिकोत्सव व पुस्तक विमोचन समारोह में शिरकत करने पहुंच जाते थे।

नवंबर माह में पिताश्री की बरसी थी। उनका फोन आया कि आने का मन है लेकिन शरीर साथ नहीं दे रहा है। एक डेढ़ घंटा बैठना भी मुश्किल है। शायद वह मूत्राशय संबंधी किसी व्याधि से ग्रसित थे। उन्होंने आश्वासन दिया था कि आगामी कथोत्सव में वह अवश्य आएंगे। लेकिन नियति के क्रूर हाथों ने उन्हें हमसे असमय ही छीन लिया। उनके जाने की ख़बर बेहद दुःखद रही। पहली जनवरी की सुबह करीब पांच बजे उन्हें हृदयाघात हुआ। परिजन उन्हें अस्पताल ले गए किंतु डॉक्टर्स की तमाम कोशिशों के बावजूद उन्हें बचाया नहीं जा सका। निसंदेह हम सबने हिंदी पत्रकारिता कार्टून की विधा का एक महत्वपूर्ण स्तंभ, बेबाक व्यक्तित्व और आत्मीय इंसान खो दिया है। आर. के. लक्ष्मण के बाद इस विधा में हाल के वर्षों में एक अन्य बेहद व्यथित करने वाली क्षति है यह। काक साहब ने हिंदी पत्रकारिता को धार देने में उत्प्रेरक का काम किया है। वह भी उस समय, जब देश को इसकी सर्वाधिक आवश्यकता थी।

कोरोना काल ने उन्हें मानसिक रूप से काफी विचलित कर दिया था और रचनात्मकता से वह बिल्कुल विमुख नज़र आते थे। उनके परिवार का कोई सदस्य शायद कोरोना से पीड़ित था। उन्होंने कूंची उठाना लगभग छोड़ दिया था। काफी हीलहुज्जत के बाद वह पुनः कूंची उठाने को सहमत हुए। यही नहीं लगभग हर रोज़ या एक दो दिन के अंतराल में वह हमारे वाट्सएप पटल 'मन मांझी दिल रंगरेजा' पर एक नया कार्टून पोस्ट कर देते थे। यह सिलसिला उनके अंतिम समय तक निरंतर जारी रहा। इसे उनकी दूसरी पारी कहा जा सकता है। जिसमें फ़ेसबुक जैसे सोशल मीडिया माध्यमों तथा निजी वेबसाइटों के जरिए नए मीडिया पर भी उनकी मौजूदगी नज़र आने लगी थी। जीवन के इस चरण में भी हर प्रकार के मीडिया पर उनकी सक्रियता और लोकप्रियता प्रभावित करती थी।

इस विलक्षण व्यक्तित्व का चले जाना कार्टून विधा के साथ-साथ हिंदी पत्रकारिता और भाषा के लिए भी बेहद दुःखद है। काक साहब हमेशा हमारी यादों में बने रहेंगे। ईश्वर उन्हें शाश्वत शांति प्रदान करे। करबद्ध श्रद्धांजलि।

०००

सुभाष चंदर, पंकज चतुर्वेदी और रिंकल शर्मा होंगे हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा सम्मानित

प्रसिद्ध व्यंग्यकार सुभाष चंदर को हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा वर्ष 2023-24 का हिंदी अकादमी हास्य व्यंग्य सम्मान, प्रतिष्ठित पर्यावरण विद् और बाल साहित्यकार श्री पंकज चतुर्वेदी को वर्ष 2023-24 का हिंदी अकादमी बाल साहित्य सम्मान तथा सुविख्यात कहानीकार एवं नाटककार रिंकल शर्मा को वर्ष 2024-25 का हिंदी अकादमी नाटक लेखन सम्मान प्रदान किया जायेगा। हिंदी अकादमी दिल्ली के उपाध्यक्ष सुरेंद्र शर्मा द्वारा जारी विज्ञप्ति के माध्यम से यह सूचना दी गयी।

सुभाष चंदर

ज्ञातव्य है कि सुभाष चंदर 50 से अधिक पुस्तकों के लेखक हैं। इसके अलावा उन्होंने रेडियो एवं टेलीविजन के लिए अनेक धारावाहिकों का लेखन भी किया है। उन्हें उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी सम्मान, व्यंग्य श्री सम्मान, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय पुरस्कार, हरिशंकर परसाई सम्मान आदि अनेक पुरस्कार मिल चुके हैं।

पंकज चतुर्वेदी

पंकज चतुर्वेदी नेशनल बुक ट्रस्ट के सह संपादक रह चुके हैं। उनके तीन हजार से अधिक आलेख प्रकाशित हो चुके हैं तथा वे बच्चों के लिए 50 से अधिक पुस्तकों का लेखन एवं अनुवाद कर चुके हैं।

रिंकल शर्मा

रिंकल शर्मा ने नाटकों के माध्यम से सामाजिक मुद्दों को बेबाकी से उठाया है और प्रेमचंद की अनेक कहानयों का नाट्य रूपांतरण भी किया और वे विभिन्न संस्थाओं द्वारा अपने साहित्यिक योगदान के लिए सम्मानित हो चुकी हैं।

डॉ. देवकीनंदन शर्मा को मिला साहित्य शिरोमणि राष्ट्रीय सम्मान...

16 नवंबर,2024 साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के सभागार 01 में आर. जे. इंस्टीट्यूट आफ हायर एजुकेशन डिबाई (बुलन्दशहर) उ. प्र. द्वारा आयोजित *रजनी सिंह रचनावली लोकार्पण एवं साहित्यकार सम्मान समारोह* में भाषा, साहित्य और संस्कृति के नवोत्थान में अतुलनीय योगदान के लिए प्रख्यात शिक्षाविद्, साहित्यकार, शुभम् साहित्य कला एवं संस्कृति संस्थान के संस्थापक तथा शुभोदय के प्रधान संपादक, डॉ. देवकीनंदन शर्मा को 'साहित्य शिरोमणि राष्ट्रीय सम्मान' से नवाज़ा गया।

डॉ. ईश्वर सिंह को मिला विरादरी बारादरी का 'विशिष्ट सृजन सम्मान'

'शुभोदय' के संपादक डॉ. ईश्वर सिंह को दिसंबर 2024 में गाजियाबाद की प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्था बिरादरी बारादरी ने 'विशिष्ट सृजन सम्मान' से सम्मानित किया। उन्होंने यह सम्मान 8 दिसंबर को बिरादरी बारादरी के अध्यक्ष - श्री गोविंद गुलशन, संरक्षक-श्रीमती माला कपूर 'गौहर' और सुश्री उर्वशी अग्रवाल तथा संयोजक-श्री आलोक यात्री की उपस्थिति में सुप्रसिद्ध शायर इकबाल अशहर और अजीज नबील के कर कमलों से ग्रहण किया।

हमारी डिग्री हमारा सेवा भाव, हमारी नम्रता, हमारे जीवन की सरलता है। अगर यह डिग्री नहीं मिली, अगर हमारी आत्मा जागृत नहीं हुई तो कागज की डिग्री व्यर्थ है।

'शुभोदय' ई-पत्रिका में रचना प्रस्तुत करने के लिए सामान्य नियम

भाषा एवं लिपि:

'शुभोदय' हिंदी भाषा की ई-पत्रिका है। अतः सभी रचनाएं हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि में उचित व्याकरण और वर्तनी के साथ लिखी जानी अपेक्षित हैं।

प्रकाशन अंक:

शुभोदय के वर्ष में दो अंक 'वसंत अंक' और 'शरद अंक' प्रकाशित किए जाते हैं। जिनके लिए रचनाकारों को अधिसूचना भेजी जाती है। इन दोनों अंकों के लिए अधिसूचना में उल्लिखित अंतिम तिथि तक टंकित रचनाएं शुभोदय की ईमेलshubhodayashubham@gmail.com प र प्राप्त हो जानी चाहिए।

विषय:

रचना किसी भी विवादास्पद विषय पर या किसी समुदाय की भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाली या राजनीतिक, धार्मिक, जातीय अथवा क्षेत्रीय विद्वेष पैदा करने वाली नहीं होनी चाहिए।

रचनाओं के प्रकार:

शुभोदय के लिए लेख, कहानी, लघु कथा, संस्मरण, कविता, गीत, ग़ज़ल, पुस्तक-समीक्षा और साहित्य जगत की महत्त्वपूर्ण हलचल और साहित्यिक विरासत आदि से सम्बन्धित मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएं भेजी जा सकती हैं।

रचनाओं का आकार: :

शुभोदय' ई-पत्रिका के लिए कविता, गीत, गजल, लघु-कथा के लिए अधिकतम 300 शब्द या एक पृष्ठ की सामग्री तथा लेख, कहानी, संस्मरण के लिए 1000 शब्द सीमा निर्धारित है।

मौलिकता:

शुभोदय में केवल मौलिक रचनाएं ही स्वीकार की जाती हैं। यदि किसी अन्य रचनाकार की कृति से कोई उद्धरण लिया गया है तो उसका उल्लेख कोष्ठक में या फुट नोट में किया जाना चाहिए।

नैतिक मानक:

लेखन में नैतिक मानकों का पालन अनिवार्य है। अभद्र भाषा या असामाजिक सामग्री अस्वीकार्य है।

स्वरूपण:

स्पष्ट शीर्षकों, उपशीर्षकों और अनुच्छेदों के साथ लेख को सही ढंग से प्रारूपित किया जाना चाहिए। रचना यूनिकोड़ में टंकित होनी चाहिएं। रचनाओं की वर्ड और पीडीएफ दोनों ही फाइल भेजी जानी चाहिए।

चित्र:

यदि लेख में चित्र हैं, तो लेखक को यह

सुनिश्चित करना चाहिए कि वे प्रासंगिक हैं, उच्च गुणवत्ता वाले हैं, और उन पर उपयुक्त शीर्षक हैं।

कॉपीराइट:

लेखकों को अपने लेखों के कॉपीराइट 'शुभोदय' ई-पत्रिका में स्थानांतरित करने के लिए सहमत होना चाहिए, जो ई-पत्रिका को प्रिंट और डिजिटल सहित किसी भी प्रारूप में लेख प्रकाशित करने की अनुमति देता है।

प्रस्तुत करने की समय सीमा:

रचनाकार 'शुभोदय' ई-पत्रिका द्वारा निर्धारित समय सीमा में अपनी रचनाएं प्रस्तुत करें। निर्धारित अवधि के बाद प्राप्त रचनाएं स्वीकार नहीं की जाएंगी।

संपादन:

'शुभोदय' ई-पत्रिका संपादक मंडल लेखक के मूल अर्थ और मंशा को बनाए रखते हुए स्पष्टता, लंबाई और शैली के लिए लेखों को संपादित करने का अधिकार सुरक्षित रखता है।

स्वीकृति:

'शुभोदय' ई-पत्रिका संपादक मंडल लेखकों को उनके लेखों की स्वीकृति या अस्वीकृति के बारे में सूचित करेगा। उचित संशोधन के बाद अस्वीकृत लेख पुनः जमा किए जा सकते हैं।

भुगतान:

लेखकों को उनके द्वारा प्रस्तुत रचनाओं के लिए कोई मौद्रिक मानदेय नहीं दिया जा सकेगा।

आवश्यक जानकारी:

रचना के साथ रचनाकार का नवीनतम फोटो (जेपीजी या जेपीईजी में), नाम, पता एवं मोबाइल नंबर होना चाहिए।

अस्वीकरण:

किसी रचना में व्यक्त विचार और उनकी मौलिकता का पूरा दायित्व रचनाकार का होगा। पत्रिका में प्रकाशित होने पर भी उसकी जबाबदेही रचनाकार की होगी, संपादक मंडल की नहीं। प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों को शुभोदय के विचार नहीं माना जाएगा।

ooo

शुभोदय